अध्याय—9

निद्रा एवं निद्रा विकृतियाँ

[SLEEP AND SLEEP DISORDERS]

सामान्य निद्रा

नींद एक नियमित, बारम्बार घटने वाली एवं प्रतिवर्त्यपूर्ण अवस्था है जिसकी विशेषताएँ हैं—जाग्रत अवस्था की तुलना में निद्रावस्था में बाह्य उद्दीपकों के प्रति अनुक्रिया करने की देहली या प्रभाव सीमा में अत्यधिक वृद्धि। निद्रा-विषयक परेशानियाँ अक्सर ही कई प्रकार की मनोविकृतियों का आरम्भिक लक्षण होती हैं, अत: मनोविकृतियों के निदान में नींद का परीक्षण भी अत्यन्त आवश्यक होता है।

निद्रा का विद्युत-शरीरक्रिया विज्ञान

निद्रा की संरचना दो शरीरक्रियात्मक अवस्थाओं से होती है—दुत्र नेत्र गति विहीन निद्रा या एन॰आर॰ई॰एम॰ निद्रा (Non-rapid eye movement sleep या NREM sleep) एवं द्रुत नेत्र गति निद्रा या आर.ई.एम. निद्रा (Rapid eye movement sleep या REM sleep)। NREM निद्रा की संरचना में नींद के चार स्तर (1 से 4 स्तर) होते हैं जिसमें कई शरीरक्रियात्मक क्रियायें जाग्रत अवस्था की तुलना में धीमी पड़ जाती है। परिमाणात्मक रूप मे REM निद्रा एक अलग प्रकार की नींद है जिसकी प्रमुख विशेषताएँ होती हैं—मस्तिष्क क्रियाओं का उच्च स्तर एवं जाग्रत अवस्था के समान शरीरक्रियात्मक क्रियायें। नींद आने के लगभग 90 मिनट बाद NREM निद्रा के पश्चात् REM निद्रा का प्रथम प्रसंग आरम्भ होता है। सामान्य वयस्कों में REM निद्रा का 90 मिनट का उद्भवन काल एक स्थिर विशेषता है। विषाद विकृतियों एवं तन्द्रालुता (Narcolepsy) में REM निद्रा उद्भवन काल लघु हो जाता है। विद्युत मस्तिष्क लेखन यंत्र (EEG) से क्रियापद सम्बन्धित द्रुत नेत्र गतियों का अनुरेखण किया जाता है। ये नेत्र गतियाँ निद्रा अवस्था की पहचान सम्बन्धी विशेषताएँ होती हैं। NREM निद्रा में द्रुत नेत्र गतियाँ या तो होती ही नहीं अथवा बहुत कम होती हैं। EEG विन्यास की संरचना में अल्प वोल्ट की यादृच्छिक एवं तीव्र गति वाली आरी के दाँतों समान लहरें होती हैं। निद्रा अवस्था में विद्युतपेशीय लेख से पेशीय तनाव में पर्याप्त कमी के प्रमाण प्रदर्शित होते हैं।

सामान्य व्यक्तियों में जाग्रत अवस्था की तुलना में NREM निद्रा अपेक्षाकृत शांतिपूर्ण होती है। नाड़ी की दर 5 से 10 धड़कन/मिनट हो जाती है, रक्त दाब तथा श्वसन गति में भी कमी परिलक्षित होती है। REM निद्रा की अवस्था में जाग्रत अवस्था की तुलना में विश्राम अवस्था में पेशीय विद्युत तनाव कम हो जाता है। NREM निद्रा में प्रासंगिक शारीरिक गतियाँ भी घटित होती हैं। NREM निद्रा की अवस्था में REM निद्रा अल्प मात्रा में ही होती है तथा इसमें पुरुषों में शायद ही कभी शिश्नोत्थान होता है।

NREM निद्रा के गहन भाग—तीसरे एवं चौथे स्तर कभी-कभी असामान्य सक्रित्यात्मक विशेषताओं से सम्बन्धित होते हैं। यदि व्यक्तियों को नींद आने के आधे से एक घण्टे बाद जगा दिया जाये अर्थात् 'मंद तरंग नींद' (slow wave sleep) की अवस्था में जगा दिया जाये तब वे भ्रमित दिखाई पड़ते हैं तथा उनका चिंतन भी असंगठित रहता है। मंद तरंग नींद की अवस्था में अल्पकाल के लिए जागने पर उनमें जाग्रत काल की घटनाओं के प्रति स्मृतिलोप भी प्रदर्शित होता है। NREM नींद की तीसरी अवस्था चौथे स्तर की अवधि मे जागरण से उत्पन्न विघटन के कारण कई विशिष्ट समस्यायें, जैसेकि असंयत मूत्रता (Enuresis), निद्राभ्रमण (Somnambulism) एवं चौथे स्तर की निद्रा-आतंक या दु:स्वप्न भी उत्पन्न हो सकते हैं।

REM निद्रा की अवस्था में बहुलेखी अनुरेखण मापों में अनियमित विन्यास प्रदर्शित होता है जो कभी-कभी सक्रिय जाग्रत अवस्था के विन्यास के समान प्रतीत होता है। इसके कारण REM निद्रा को 'विरोधाभाषी नींद' (paradoxical sleep) भी कहते हैं। NREM निद्रा की तुलना में REM निद्रा में नाड़ी गति, श्वसन गति एवं रक्त दाब काफी अधिक होते हैं तथा इनमें मिनट-मिनट में परिवर्तन उत्पन्न होते रहते

हैं। REM निद्रा की अवधि में मस्तिष्क द्वारा ऑक्सीजन के उपयोग में भी वृद्धि हो जाती है। REM निद्रा की अवस्था में CO_2 के बढ़े हुए स्तर के प्रति संवातनीय अनुक्रिया (ventilatory response) मंद या अवनमित ही रहती है ताकि CO_2 के आंशिक दाब में वृद्धि होने पर भी ज्वारीय आयतन में वृद्धि न हो। REM निद्रा में शारीरिक ताप नियमन में भी बदलाव उत्पन्न होता है। जाग्रत अवस्था एवं NREM निद्रा की अवस्था में समतापीय दशा की तुलना में REM निद्रा की अवस्था में विषमतापीय दशा प्रबल रहती है। विषमतापीय दशा, जो कि सरीसृप प्राणियों की विशेषता है, के कारण परिवेष्टित ताप में परिवर्तन होने पर शरीर के ताप को स्थिर बनाए रखने के लिए शरीर कँपकपाहट या पसीना आना जैसी अनुक्रियायें करने में विफल रहता है। लगभग प्रत्येक REM निद्रा की अवधि में पुरुषों में आंशिक या पूर्ण शिश्नोत्थान भी घटित होता है पुरुषों में इस प्रकार का शिश्नोत्थान उनमें नपुंसकता के निदान में अत्यधिक सहायक होता है। क्योंकि नपुंसकता के निदान के लिए शिश्न शोथ-फुल्लता का निद्रा प्रयोगशालीय अध्ययन ही सबसे अधिक विश्वसनीय परीक्षण है। REM निद्रा में एक और महत्वपूर्ण शरीरक्रियात्मक परिवर्तन होता है और वह है सम्पूर्ण कंकालीय माँसपेशियों का पूरी तरह से शिथिल पड़ जाना जिसके कारण REM निद्रा की अवस्था में शारीरिक गतियाँ अनुपस्थित रहती हैं। REM निद्रा की सबसे प्रमुख विशेषता है—स्वप्न देखना। REM निद्रा में जगाये गये व्यक्ति यह बताते हैं कि वे स्वप्न देख रहे थे। REM निद्रा के स्वप्न अमूर्त तथा वास्तविकता से हटकर होते हैं। NREM निद्रा में भी स्वप्न आते हैं पर वे अधिकतर स्पष्ट एवं उद्देश्यपूर्ण होते हैं।

नींद की यह चक्रीय प्रकृति नियमित एवं विश्वसनीय होती है। रात्रि में प्रत्येक 90 से 100 मिनट के अन्तराल पर एक REM की अवस्था उत्पन्न होती है। प्रथम REM निद्रा की अवधि लघु, लगभग 10 मिनट की होती है। बाद में REM निद्रा की अवधि अपेक्षाकृत दीर्घ लगभग 15 से 40 मिनट तक की हो सकती है। रात्रि के अन्तिम तिहाई भाग में अधिकतर REM अवस्था उत्पन्न होती है, जबकि रात्रि के प्रथम तिहाई भाग में NREM का स्तर 4 नींद घटित होता है।

व्यक्ति के पूर्ण जीवन काल में नींद का यह विन्यास परिवर्तित होता रहता है। शिशु अवस्था में पूर्ण निद्रा अवधि का लगभग 50 प्रतिशत REM निद्रा होती है। EEG अभिलेखों से ज्ञात होता है कि शिशु बिना NREM की 1 से 4 अवस्थाओं से गुजरे ही सीधे ही जाग्रत अवस्था से REM निद्रा की अवस्था में पहुँच जाते हैं। नवजात शिशु प्रतिदिन लगभग 16 घण्टे सोता है तथा बीच-बीच में लघुकाल के लिए जागृत रहता है। चार महीने की आयु होने पर REM निद्रा की मात्रा घटकर 40 प्रतिशत रह जाती है तथा नींद का आरम्भ NREM निद्रा में जाने से होता है। युवा वयस्कावस्था आने तक निद्रा अवस्थाओं का वितरण निम्नलिखित प्रकार से हो जाता है—NREM (75%)-अवस्था-1 (5%), अवस्था-2 (45%), अवस्था-3 (12%), अवस्था-4 (13%) एवं REM (25%)।

निद्रा अवस्थाओं का यह वितरण वृद्धावस्था तक भी लगभग स्थिर बना रहता है। हालांकि वृद्ध व्यक्तियों में 'मंद तरंग नींद' एवं REM नींद दोनों में थोड़ी कमी हो जाती है।

निद्रा नियमन में स्नायुविक क्रियाओं की भूमिका

अधिकांश शोधकर्ताओं की यह मान्यता है कि नींद के नियंत्रण में सिर्फ एक मस्तिष्क केन्द्र की भूमिका नहीं होती है बल्कि नींद के नियंत्रण के लिए परस्पर सम्बन्धित तंत्रों या केन्द्रों की एक छोटी संख्या है जो मस्तिष्क स्तम्भ में होते हैं तथा ये परस्पर एक-दूसरे को सक्रिय अथवा अवरोधित करते हैं। कई अध्ययनों से नींद में सेरोटोनिन की भूमिका को भी समर्थन प्राप्त हुआ है। सेरोटोनिन संश्लेषण को अवरोधित करने अथवा मस्तिष्क सेरोटोनिन निमुक्ति सम्बन्धित लगभग सभी कोशिका शरीरों को आविष्ट करने वाले क्षेत्र पृष्ठीय तुन्नसेवनी केन्द्रक (dorsal nucleus) को नष्ट कर देने से नींद की मात्रा में दीर्घकाल के लिए कमी आ जाती है। सेरोटोनिन का संश्लेषण एवं निमुक्ति इस स्नायुप्रेषित्र के पूर्ववर्ती एमीनो अम्ल, जैसेकि ट्रिप्ओफॉन की उपलब्धता से प्रभावित होता है। भोज्य पदार्थों में एल-ट्रिप्टोफॉन (L-tryptophan) की अधिक मात्रा (1 से 15 g) ग्रहण करने से नींद समय से आती है तथा सोते समय जागने की बारम्बारता में भी कमी आती है। जो स्नायु नॉइपीनेफ्रीन को आविष्ट करते हैं तथा जिनके कोशिका शरीर मस्तिष्क के लोकस सेरयूलस (locus ceruleus) क्षेत्र में स्थित होते हैं उनकी भूमिका सामान्य निद्रा विन्यास के नियंत्रण में पायी गयी है। अगर ये स्नायु किसी औषधि अथवा किसी अन्य हस्तोपचार से उत्तेजित होते हैं तब फिर REM निद्रा में कमी होती है और

जाग्रत अवस्था में वृद्धि होती है। मस्तिष्क में उपलब्ध एसिटाइलकोलीन (acetylcholine) की भूमिका भी निद्रा, विशेषकर REM निद्रा की उत्पत्ति, में होती है। पशुओं पर किये गये अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ है कि मस्तिष्क के पॉन्स (pons) से सम्बन्धित जालीदार रचना में कोलिनर्जिक-मुस्कैरिनिक (cholinergic-muscarinic) प्रचालकों के अंत:क्षेपण से निद्रा-जागरण अवस्थाओं में जाग्रत अवस्था से REM निद्रा की तरफ स्थानान्तरण उत्पन्न होता है। केन्द्रीय कोलिनर्जिक क्रियाशीलता में विक्षोमों का सम्बन्ध प्रमुख विषादी विकृति में निद्रा विक्षोभों से पाया गया है। सामान्य व्यक्तियों एवं विषाद विहीन मनोचिकित्सकीय रोगियों की तुलना में विषादग्रस्त व्यक्तियों में REM निद्रा विन्यास सम्बन्धी विघटन पाया जाता है। इन व्यक्तियों में REM निद्रा शीघ्र घटित होती है (60 मिनट या कम समय में ही), REM निद्रा का प्रतिशत बढ़ जाता है तथा REM निद्रा रात्रिकालीन निद्रा अवधि के दूसरे आधे भाग में ही अधिक घटित होती है। विषाद विकृति के रोगियों में कोलिनर्जिक-मुस्कैरिनिक प्रचालकों का प्रयोग NREM निद्रा के पहले अर्द्ध या अन्तिम अर्द्ध अवधि में करने पर REM निद्रा का त्वरित आरम्भ होता है। विषाद का सम्बन्ध एसिटाइलकोलीन के प्रति एक बुनियादी अतिसंवेदनशीलता से हो सकता है। जो औषधियाँ REM निद्रा को उत्पन्न करती हैं, जैसेकि विषादरोधी औषधियाँ, वे विषाद की चिकित्सा में भी लाभकारी होती हैं। यह भी देखा गया है कि प्रमुख विषाद विकृति से ग्रस्त सभी रोगियों में से लगभग 50 प्रतिशत रोगियों को यदि नींद से वंचित किया जाता है अथवा सीमित नींद ही लेने दिया जाये तब उनकी विषाद की अवस्था में अस्थायी सुधार परिलक्षित होता है। इसके ठीक विपरीत रिसरपाइन (Reserpine) एक ऐसी औषधि है जो REM निद्रा उत्पन्न करती है और इस औषधि के प्रयोग से विषाद भी उत्पन्न होता है। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य प्रकार की मनोविकृतियों में भी निद्रा दुष्क्रियायें उत्पन्न होती हैं जिनसे ज्ञात होता है कि नींद में एसिटाइलकोलीन स्नायुओं की भूमिका होती है। अल्झाइमर्स प्रकार के मनोभ्रंश के रोगियों में REM निद्रा एवं 'मंद-तरंग-नींद' में कभी जैसे निद्रा विघटन प्रदर्शित होते हैं।

अल्झाइमर्स रोग का प्रमुख कारण मस्तिष्क में कोलिनर्जिक स्नायुओं का अपक्षय माना जाता है। आधारित अग्र मस्तिष्क में कोलिनर्जिक स्नायुओं के अपक्षय को अल्झाइमर रोग में निद्रा विघटन के लिए जिम्मेदार माना जाता है। उपर्युक्त वर्णित स्नायुप्रेषित्रों के अलावा नींद में मेलाटोनिन एवं डोपामीन की भूमिकाओं के भी प्रमाण मिले हैं। पीनियल ग्रन्थि (pineal gland) से स्रावित होने वाले हार्मोन मेलाटोनिन (Melatonine) का स्राव चमकदार प्रकाश की उपस्थिति में अवरुद्ध हो जाता है, अत: दिन की पूरी अवधि में शरीर द्रव्य में मेलाटोनिन की सांद्रता कम ही बनी रहती है। अध:श्चेतक (hypothalamus) का सुप्राकिएस्मेटिक केन्द्रक (suproachiasmatic nucleus) सर्केडियन (circadian) गतिप्रेरक के केन्द्र की तरह कार्य कर सकता है और यह केन्द्र मेलाटोनिन के स्राव तथा मस्तिष्क के 24 घण्टे के निद्रा-जागरण चक्र को नियंत्रित करता है। जो औषधियाँ मस्तिष्क में डोपामीन सांद्रता की वृद्धि में सहायक होती हैं उनके प्रयोग से सक्रियता एवं जागरण की अवस्था उत्पन्न होती है। इसके ठीक विपरीत डोपामीन अवरोधी औषधियों के प्रयोग से नींद की अवधि में वृद्धि होती है।

निद्रा के कार्य

मानव जीवन में नींद एक आवश्यक प्रक्रिया है। जीवन में नींद का क्या महत्व है? इसके क्या कार्य हैं? सिर्फ मनुष्यों में ही नहीं, बल्कि अन्य कई प्रकार के प्राणियों में भी नींद एक आवश्यक घटना है जो एक नियमित अन्तराल पर घटित होती रहती है। नींद के कार्य को समझने के लिए विभिन्न विधियों का सहारा लिया गया है। अधिकांश शोधकर्ताओं के अनुसार, नींद एक पुन: स्थापनीय, बलवर्धक, समस्थिति सम्बन्धी प्रक्रिया है जो, ऐसा प्रतीत होता है कि, सामान्य ताप नियमन एवं ऊर्जा संरक्षण के लिए आवश्यक है। चूँकि व्यायाम एवं आहारहीनता के पश्चात् REM निद्रा में वृद्धि होती है, अत: नींद की इस अवस्था का सम्बन्ध शरीर की चयापचयी आवश्यकताओं की पूर्ति से हो सकता है।

शोधकर्ताओं ने इस दिशा में भी कार्य किये कि अगर निद्रा वंचन की स्थिति उत्पन्न कर दी जाये तब क्या प्रभाव उत्पन्न होंगें। निद्रा वंचन की दीर्घ अवधि की स्थिति में कभी-कभी अहम् विघटन, विभ्रम एवं व्यामोह उत्पन्न हो सकते हैं। व्यक्तियों को REM निद्रा के आरम्भ में ही जगा देने से उनमें REM निद्रा अवधियों की संख्या एवं मात्रा दोनों में ही वृद्धि हो जाती है। REM निद्रा से वंचित व्यक्ति चिड़चिड़ापन एवं आलस्य का

प्रदर्शन कर सकते हैं। चूहों पर किये गये प्रयोगों से यह ज्ञात हुआ है कि उनमें निद्रा वंचन से एक ऐसा संलक्षण उत्पन्न होता है जिसमें दुर्बल स्वरूप, चर्मविक्षति, परिवर्द्धित भोजन अन्तर्ग्रहण, भार-हानि, परिवर्द्धित ऊर्जा अपक्षय, ह्रासित शारीरिक ताप एवं मृत्यु निहित होते हैं। निद्रा वंचन के कारण शरीर द्रव्य में नॉरइपीनेफ्रीन के स्तर में वृद्धि तथा थायरॉक्सिन के स्तर में कमी जैसे हार्मोन परिवर्तन भी उत्पन्न होते हैं।

प्रत्येक व्यक्ति की नींद की आवश्यकता भिन्न-भिन्न होती है। अधिकांश वयस्क रात्रि में 5-6 से 8 घण्टे प्रतिदिन सोकर तरोताजा अनुभव करते हैं। वयस्कों की तुलना में बच्चे एवं किशोर अधिक सोते हैं एवं वृद्ध व्यक्तियों की तुलना में युवा-वयस्क लोग अधिक सोते हैं। कुछ व्यक्ति सामान्य रूप में कम सोते हैं और सामान्य रूप से क्रिया करने के लिए 6 घण्टे से कुछ कम अवधि की नींद ही पर्याप्त होती है। दूसरी तरफ कुछ अन्य व्यक्ति अधिक सोते हैं और इनको 9 घण्टे से अधिक अवधि की नींद की आवश्यकता होती है। सामान्यत: कम सोने वाले व्यक्ति निपुण, महत्वाकांक्षी, सामाजिक रूप से दक्ष एवं संतुष्ट होते हैं, जबकि अधिक सोने वाले व्यक्ति हल्का विषादग्रस्त, चिंतित एवं सामाजिक रूप से विरक्त होते हैं। शारीरिक कार्य करने से व्यायाम, रुग्णता, गर्भावस्था, सामान्य मानसिक तनाव एवं परिवर्द्धित मानसिक क्रियाओं की दशा में नींद की मात्रा में वृद्धि होती है। तीव्र मनोवैज्ञानिक उद्दीपन, जैसे अधिगम की कठिन परिस्थितियों एवं प्रतिबल तथा कुछ रसायनों एवं औषधियों (जो मस्तिष्क में उपलब्ध कैटेकोलामाइनों की मात्रा में कमी करते हैं) के सेवन के पश्चात् REM निद्रा अवधियों में वृद्धि होती है।

निद्रा-जागरण अनुक्रम

बिना किसी बाह्य संकेत के प्राकृतिक निद्रा-जागरण अनुक्रम 25 घण्टे में चक्र पूरा करती है, जबकि सूर्य का प्रकाश-अंधकार का चक्र 24 घण्टे में पूरा होता है (Czeisler et al, 1980)। बाह्य कारकों, जैसे प्रकाश-अंधकार चक्र, प्रतिदिन की दिनचर्या, भोजन का समय एवं अन्य कारकों के प्रभाव के कारण व्यक्तियों की जैविक घड़ी 24 घण्टे के समकालिक हो जाती है। इस 24 घण्टे के अन्दर वयस्क लोग एक बार या कभी-कभी दो बार सोते हैं। जन्म के समय निद्रा-जागरण अनुक्रम अनुपस्थित होता है तथा इसका विकास आगे के दो वर्षों की अवधि के दौरान होता है। कुछ महिलाओं में मासिक चक्र की अवधि में निद्रा के इस चक्र में परिवर्तन उत्पन्न होता है। अलग-अलग समय पर लिये गये झपकियों के REM एवं NREM में काफी अन्तर होता है। प्रात:काल अथवा दोपहर में ली गयी झपकियों में REM की मात्रा अधिक होती है जबकि सायंकाल ली गयी झपकियों में REM की मात्रा कम होती है। दिन के समय के नींद एवं रात्रि के सामान्य नींद के शरीरक्रियात्मक विन्यास समान नहीं होते हैं, इनके मनोवैज्ञानिक व्यवहार सम्बन्धी प्रभाव भी भिन्न होते हैं। सामान्यत: हमारी दिनचर्या एवं कार्य 24 घण्टे की दिन-रात के चक्र के अनुसार अभ्यस्त होते हैं, अत: इनमें किसी भी प्रकार के व्यवधान से कई समस्यायें उत्पन्न हो सकती है। जेट-विलम्बन (Jet-lag) इस प्रकार के व्यवधान का एक अच्छा उदाहरण है जिसमें व्यक्ति एक समायांचल (time zone) से दूसरे समयांचल में यात्रा करता है। यदि व्यक्ति पूर्व से पश्चिम दिशा की ओर लम्बी दूरी की यात्रा करता है तब फिर वह एक-दूसरे ही समयांचल में पहुँच जाता है जहाँ का दिन-रात का चक्र भिन्न होता है और कभी-कभी ठीक विपरीत होता है। ऐसी अवस्था में व्यक्ति अपने शरीर को एक ऐसे समय सोने के लिए बाध्य करता है जिसके लिए उसका शरीर एवं उसके शरीर के अन्य चक्र अभ्यस्त नहीं हैं। सामान्यत: अधिकांश व्यक्ति इस स्थिति के प्रति शीघ्र ही अनुकूलित हो जाते हैं परन्तु कुछ व्यक्तियों को इस अनुकूलन में अधिक समय भी लग सकता है। इस तरह की परिस्थितियों में व्यक्तियों के शरीर में चक्र सम्बन्धी दीर्घकालिक विघटन एवं अवरोध निहित होते हैं।

निद्रा विकृतियाँ

प्रमुख लक्षण—सामान्य जनसंख्या में निद्रा विकृतियों की व्यापकता बहुत है और इनका सम्बन्ध चिकित्सकीय, मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक विक्षोभों से होता है (Bixler er al, 1979; Lugaresi et al, 1983)। व्यक्तियों में निद्रा की आवश्यक मात्रा भिन्न-भिन्न हो सकती है। कुछ लोगों को 9 से 10 घण्टे प्रति रात्रि नींद की आवश्यकता होती है और कुछ अन्य व्यक्ति कम ही सोते हैं। निद्रा अवधि का निद्रा विकृतियों से हमेशा ही सम्बन्ध नहीं होता है। सभी आयु के लोगों में निद्रा सम्बन्धी समस्यायें परिलक्षित होती हैं और इन

समस्याओं की प्रकृति एवं जैविक महत्ता में बहुत अन्तर भी पाया जाता है। निद्रा विकृतियों की चार प्रमु विशेषताएँ होती हैं–

1. अनिद्रा (Insomnia);
2. अतिनिद्रा (Hypersomnia);
3. परानिद्राएँ (Parasomnias);
4. निद्रा–जागरण योजना में विक्षोभ (Sleep-Wake Schedule Disturbance)।

1. अनिद्रा
[INSOMNIA]

अनिद्रा एक अति सामान्य समस्या है और चिकित्सकों के यहाँ परामर्श के लिए पहुँचने वाले सभी रोगियों में से लगभग 1/ 5 रोगी इससे ग्रस्त रहते हैं (Kales et al, 1987)। उम्र बढ़ने के साथ इसके घटनाक्रम में वृद्धि पायी गयी है और इससे महिलाएँ अधिक प्रभावित होती हैं। नींद को प्रारम्भ करने अथवा उसे सतत् बनाये रखने में कठिनाई को अनिद्रा कहते हैं। यह दृढ़ अथवा अल्पकालिक हो सकती है। अनिद्रा की लघु अवधि का सम्बन्ध अधिकतर चिंता एवं प्रतिबल से होता है। यह चिंतापूर्ण अनुभवों के कारण अथवा चिंताजनक अनुभवों (जैसे परीक्षा या साक्षात्कार का होना) के कारण उत्पन्न हो सकता है। कुछ व्यक्तियों में अल्पकालिक अनिद्रा का सम्बन्ध किसी दु:ख, क्षति या जीवन में किसी परिवर्तन या प्रतिबल से हो सकता है। सामान्यत: अल्पकालिक अनिद्रा में गम्भीर स्थिति उत्पन्न नहीं होती है। कभी-कभी तीव्र अल्पकालिक अनिद्रा की अवस्था में विषाद या मनोविदलन के प्रसंग भी उत्पन्न हो सकते हैं। सामान्यत: इसमें चिकित्सा की आवश्यकता नहीं पड़ती है। कुछ दशाओं में चिकित्सक लघुकाल के लिए निद्राजनक औषधियों के प्रयोग की सलाह दे सकते हैं।

दृढ़ या चिरकालिक अनिद्रा एक सामान्य समस्या है तथा इससे ग्रस्त व्यक्ति को नींद आने में परेशानी का अनुभव होता है, न की नींद की अवधि या अवस्था में रहने की। अनिद्रा में नींद आने में कठिनाई के अनुभव के साथ-साथ सोते रहने या प्रात:काल सामान्य से पहले ही जाग्रत हो जाने की शिकायत भी हो सकती है (Kales et al, 1987)। सामान्य निद्रा वाले व्यक्तियों की तुलना में अनिद्रा-ग्रस्त व्यक्ति देर रात की अपेक्षाकृत सुबह जागने पर बदतर अनुभव करते हैं। ये व्यक्ति सुबह जागने पर तंद्रालु (उनींदा), मदहोश (अस्थिर), चिंतित, चिड़चिड़ा एवं शारीरिक एवं मानसिक रूप से थका हुआ अनुभव करते हैं। ये लक्षण दिन में भी बने रहते हैं तथा इनके कारण थकान एवं विषाद की भावनाएँ उत्पन्न होती हैं। जैसे–रात्रि में बिस्तर में जाने का समय नजदीक आता है वैसे-वैसे अनिद्राग्रस्त व्यक्ति अधिक तनावग्रस्त, चिंतित एवं स्वास्थ्य, मृत्यु, कार्य एवं व्यक्तिगत समस्याओं के लिए अधिक फिक्रमंद होते जाते हैं। ऐसे कई व्यक्तियों में सोने से पहले या नींद की अवधि में स्वायत्त अतिक्रियाशीलता भी परिलक्षित होती है। जैसे–हृदय की धड़कन में वृद्धि, पेशीय तनाव, शारीरिक ताप में वृद्धि एवं परिधीय वाहिका-संकुचन (Monroe, 1967)।

इस प्रकार की अनिद्रा में अक्सर ही दो अलग-अलग समस्यायें आपस में उलझी हुई रहती हैं, और ये हैं–

(i) तनावों एवं चिंता का दैहीकीकरण (शारीरिक लक्षणों में परिवर्तित हो जाना), एवं (ii) एक अनुबंधित संबंधित अनुक्रिया।

रोगी अनिद्रा के अतिरिक्त किसी अन्य स्पष्ट समस्या को नहीं बता पाता है। उसे चिंता का अनुभव नहीं होता है, परन्तु वह अपनी चिंता को शरीरक्रिया रूप में व्यक्त कर सकता है। वह भयपरक अनुभवों अथवा किसी बारम्बार होने वाले विचारों के कारण नींद न आने की शिकायत कर सकता है।

अनिद्रा के तीन प्रमुख प्रकार के कारण हो सकते हैं–

(i) चिकित्सकीय/मनोचिकित्सकीय रुग्णताएँ (Medical/Psychiatric Illness);

(ii) औषधियाँ (Drugs);

(iii) मनोसामाजिक कारक (Psychosocial Factors)।

(i) चिकित्सकीय एवं मनोचिकित्सकीय रुग्णतायें—अधिकांश उम्रदराज व्यक्ति एक या दो से अधिक दीर्घकालिक चिकित्सकीय रोगों से ग्रस्त होते हैं जो उनमें अनिद्रा के लक्षण उत्पन्न कर सकते हैं। वयोवृद्ध व्यक्तियों में अनिद्रा की समस्यायें सर्वाधिक घटित होती हैं। जो दीर्घकालिक रोग निद्रा विघटन उत्पन्न कर सकते हैं उनमें प्रमुख हैं—गठिया (Arthritis), पेशीयकंकालीय दर्द (Musculoskeletal Pain), दुर्दमता (कैंसर-अर्बुद) (Malignancy), रजोनिवृत्ति (Menopause), पार्किन्सन रोग (Parkinson's disease), अल्झाइमर रोग (Alzheimer's Disease), हृदयशूल (Angina Pectoris), रक्ताधिक्यजन्य हृदपात (Congestive Heart Failure), दमा (Asthma), आघात (Stroke) (जैसे हृदयाघात, आदि), दीर्घकालिक अवरोधी फुफ्फुसीय रोग (Chronic Pulmonary Disease), आमाशयी-ग्रासनलीय पश्चवाह रोग (Gastroesophageal Reflux Disease)।

इसी प्रकार, मनोचिकित्सकीय विकृतियों का भी अनिद्रा से सम्बन्ध पाया गया है, विशेषकर, विषाद का। अधिक आयु वाले वयस्कों में विषाद का अनिद्रा से उच्च सम्बन्ध पाया गया है। वास्तविकता तो यह भी है कि प्रमुख विषादी प्रसंग के नैदानिक लक्षणों में से एक अनिद्रा भी है। वयोवृद्ध व्यक्तियों में विषादी मनोदशा भी अनिद्रा का संकेतक हो सकता है। सामान्यत: चिंता विकृतियों में भी अनिद्रा घटित होती है (Ford & Kancrow, 1989; Mellinger et al, 1985)। हालांकि विषाद के कारण अतिनिद्रा भी उत्पन्न होती है परन्तु अनिद्रा प्रमुख विषादी विकृति का एक स्वतंत्र जोखिमपूर्ण कारक है (Livingston et al, 1993)। मनोभ्रंश के कारण भी अपर्याप्त नींद की दशा उत्पन्न होती है। मनोभ्रंश से ग्रस्त अधिकांश रोगी परिचर्या गृहों में पूरे 24 घण्टे में उनींदा या हल्का जाग्रत रहते पाये गये हैं, ये न तो पूरी तरह नींद में थे और न ही पूरी तरह जाग्रत थे। इनमें विखण्डित नींद उपस्थित थी (Ancoli-Israel et al, 1991)।

परिचर्या गृहों में प्रकाश व्यवस्था नहीं होती है और प्रकाश की मात्रा नींद का नियमन करती है। परिचर्या गृहों के कमरों में मद्धिम रोशनी की व्यवस्था होती है, अत: इनमें रह रहे व्यक्तियों को दिन के प्रकाश की पर्याप्त मात्रा उपलब्ध नहीं हो पाती है। रोगियों में मनोभ्रंश का स्तर कुछ भी हो, यदि उन्हें दिन में पर्याप्त प्रकाश की मात्रा उपलब्ध होती है तब वे रात्रि में कम बार जागते हैं। परिचर्या गृहों में रहने वाले रोगियों को रात्रि में भी आवश्यकता से अधिक प्रकाश उपलब्ध होता है क्योंकि अक्सर ही सभी प्रकाश स्रोत प्रकाशमान रहते हैं जिसके कारण नींद में अवरोध उत्पन्न हो सकता है। शीर्ष ग्रन्थि से मेलाटोनिन का स्राव होने के लिए रात्रि में अन्धकार की आवश्यकता होती है और मेलाटोनिन के स्राव से नींद का आरम्भ होता है तथा यह निद्रा-जागरण चक्र का भी नियमन करता है (Lewy, 1983)। अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ है कि परिचर्या गृहों में अक्सर रात्रि में शोर होता रहता है जिसके कारण भी नींद सम्बन्धी कठिनाईयाँ उत्पन्न हो सकती हैं।

(ii) औषधियाँ—अनिद्रा का मूल्यांकन करते समय सहउपस्थित रुग्णताओं का ही मूल्यांकन करना आवश्यक नहीं है अपितु यह भी देखना चाहिए कि रोगी को कौन-सी औषधियाँ/दवाएँ दी जा रही हैं। कई दवाएँ उत्तेजक होती हैं। जैसे—केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र को उत्तेजित करने वाले कई पदार्थ, बीटा अवरोधक (Betablockers), श्वासनली विस्फारक (Bronchodilators), कैल्सियम मार्गरोधक (Calcium Channel Blockers), कार्टिकोस्टीरायड (Cortiosteroids), विषादरोधी उत्तेजक (Stimulating Antidepressants), अवटु हार्मोन (Thyroid Hormons) एवं शोथहरण पदार्थ (Decongestants), जो अनिद्रा उत्पन्न कर सकते हैं। इसी प्रकार से शामक औषधियाँ, जो दिन के समय निद्रा उत्पन्न करती हैं, वे रात में अनिद्रा को जन्म दे सकती हैं। इन औषधियों में प्रमुख हैं—दीर्घ समय तक क्रियाशील रहने वाले निद्राजनक पदार्थ (Hypnotics), उच्चरक्तचाप प्रतिरोधी (Antihypertensives), हिस्टामीन प्रतिरोधी (Antihistaminics), प्रशान्तक (Tranquilçers) एवं कुछ विषाद प्रतिरोधी पदार्थ।

अनिद्रा का मूल्यांकन करते समय यह भी ध्यान रखना चाहिए कि क्या व्यक्ति अन्य औषधियों, जैसे शराब, कैफीन या निकोटीन का सेवन तो नहीं कर रहा है। कुछ व्यक्ति नींद को उत्पन्न करने के लिए सोने के पहले शराब का सेवन करते हैं। हालांकि शराब आरम्भ में तो नींद आने में सहायता करती है परन्तु जैसे ही रक्त में इसकी सांद्रता कम होती है यह व्यक्ति में जागरण की अवस्था उत्पन्न कर देती है। कैफीन के सेवन से निद्रा की पूरी अवधि में कमी होती है तथा इससे जागने की संख्या में वृद्धि होती है (Karacan et al, 1976)। यहाँ यह ध्यान में रखना चाहिए कि कैफीन सिर्फ कॉफी में ही नहीं पाया जाता है वरन् यह चाय, सोडा एवं विकाफीभवित कॉफी में भी पाया जाता है। इसी प्रकार, निकोटीन सेवन से भी निद्रा सम्बन्धी कठिनाइयाँ उत्पन्न होती है।

(iii) **मनोसामाजिक कारक**—वृद्ध व्यक्तियों में कुछ मनोसामाजिक कारक, जैसेकि सेवानिवृत्ति, पृथक्कीकरण, अकेलापन, वियोग एवं शोक के कारण भी अनिद्रा प्रवर्धित होती है। व्यक्ति की क्रियाशीलता में कमी (जैसे, बीमारी के कारण बिस्तर पर पड़े रहना या व्यवसाय की प्रकृति के कारण निरुद्योगशीलता या अक्रियाशीलता) भी नींद के विन्यास को प्रभावित कर सकता है (Prinz et al, 1990)। अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ है कि दैहिक रूप से स्वस्थ वृद्ध व्यक्तियों को रात्रि में अच्छी नींद आती है। इसी प्रकार, स्वस्थ बुजुर्ग व्यक्तियों (जिनमें निद्रा सम्बन्धी शिकायतें थीं) में व्यायाम करने से निद्रा की गुणवत्ता में सुधार पाया गया है।

उपर्युक्त मनोसामाजिक कारकों के अतिरिक्त मनावैज्ञानिक एवं पर्यावरणीय कारकों में प्रमुख हैं—चिंता, चिंता से उत्पन्न पेशीय तनाव, पर्यावरणीय परिवर्तन, सर्केडियन-आवर्तन-निद्रा विकृति, प्राथमिक विषाद, पश्च-आघातीय प्रतिबल विकृति एवं मनोविदलन जिनके कारण भी अनिद्रा प्रवर्धित होती है।

चिकित्सा

निद्रा विकृतियों में प्राथमिक अनिद्रा की चिकित्सा एक अत्यन्त कठिन कार्य है। यदि अनिद्रा में एक प्रमुख अनुबंधन तत्व भी निहित है तब निरानुबंधन (deconditioning) तकनीक लाभकारी हो सकती है। रोगियों को यह निर्देश दिया जाता है कि वे अपने बिस्तर का उपयोग सिर्फ सोने के लिए ही करें किसी अन्य कार्य के लिए नहीं। यदि बिस्तर पर जाने के बाद उन्हें 5 मिनट के अन्दर नींद नहीं आती है तब उन्हें यह निर्देश होता है कि वे उठ जायें तथा कोई अन्य कार्य करें। ऐसी दशा में कभी-कभी किसी अन्य बिस्तर पर सोने से अथवा किसी अन्य कमरे में सोने से भी लाभ होता है। यदि कोई कायिकीकृत तनाव या पेशीय तनाव की प्रमुखता है तब शिथिलीकरण तकनीकों, अन्तःप्रेरणात्मक ध्यान एवं जैव-पश्चप्रोत्साहन भी कभी-कभी प्रभावकारी होते हैं। प्राथमिक अनिद्रा की चिकित्सा में सामान्यतः मनोचिकित्सा से लाभ नहीं होता है। पुरुषों में संतुष्टिपूर्ण यौन अनुभव से नींद आने में सहायता मिलती है।

भेषज चिकित्सा—सामान्यतः अनिद्रा की चिकित्सा बेन्जोडायजेपीनों, जॉल्पीडेन, (Zolpiden), जोलेप्लॉन (Zoleplon) एवं अन्य निद्राजनक (hypnotic) औषधियों से की जाती है। दीर्घ अवधि तक क्रियाशील रहने वाले बेन्जोडायजेपीन, जैसे फ्लूराजेपाम (flurazepam) एवं कुआजेपाम (Quazepam) मध्य-रात्रि की अनिद्रा में लाभकारी होते हैं, जबकि जिन व्यक्तियों को नींद आने में कठिनाई होती है उनमें कम समय तक क्रियाशील रहने वाली औषधियों, जैसे जॉल्पीडेन एवं ट्रायाजोलाम (Triazolam) के प्रयोग से लाभ होता है। निद्राजनक औषधियों का सेवन सावधानीपूर्वक करना चाहिए। सामान्यमतः इन औषधियों का प्रयोग 2 सप्ताह से अधिक समय तक नहीं करना चाहिए।

निद्रा में वृद्धि करने वाली औषधियाँ

बेन्जोडायजेपीन—डायजेपाम, लोराजेपाम, टेमाजेपाम, फ्लूराजेपाम व अन्य
इतर-बेन्जोडायजेपीन चिंता रोधी—बुसपिरोन
स्वापक पीड़ाहर—हाइड्रोकोडोन
बार्बीचुरेट—फेनोबार्बीटाल, पेन्टोबार्बीटाल
विषाद प्रतिरोधी—एमिट्रिप्टाइलीन
हिस्टामीन प्रतिरोधी—डाइफेनहाइड्रामीन
उच्च रक्तचाप प्रतिरोधी—मिथइलडोपा
मनोविक्षिप्तता प्रतिरोधी—क्लोरप्रोमाजीन, हैलोपेरिडॉल

सजगता में वृद्धि करने वाली औषधियाँ

केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र को उत्तेजित करने वाली औषधियाँ—ऐम्फीटामीन, कैफीन, मिथाइलफेनिडेट
नये पदार्थ—मोडाफिनिल

2. अतिनिद्रा
[HYPERSOMNIA]

अतिनिद्रा में अध्यधिक नींद परिलक्षित होता है। प्रभावित व्यक्ति दिन के समय भी निद्रालुता (Somnolence) का अनुभव करता है अथवा वह कभी-कभी रात्रि एवं दिन दोनों ही समय अधिकाधिक सोता है। 'निद्रालु' (Somnolent) शब्द का अर्थ उन व्यक्तियों के लिए किया जाता है जो व्यक्ति नींद आने की शिकायत करते हैं तथा जिन्हें जाग्रत अवस्था में अचानक ही नींद आ जाती है अथवा जिन्हें नींद के दौरे पड़ते हैं तथा वे जागते हुए नहीं रह सकते हैं। अनिद्रा की तुलना में अतिनिद्रा की घटनाएँ कम घटित होती है। वयस्कों में लगभग 5 प्रतिशत व्यक्ति इससे ग्रस्त होते हैं (Bixler et al, 1979)।

अल्पकालिक एवं परिस्थितिजन्य अतिनिद्रा में सामान्य निद्रा-जागरण योजना विघटित हो जाती है। व्यक्ति अत्यधिक नींद का अनुभव करता है तथा वह अधिकतर बिस्तर में ही असामान्य रूप से लम्बे समय तक रहना चाहता है अथवा बार-बार छोटी-छोटी अवधि के लिए बिस्तर में सोने जाता है। जीवन में किसी परिवर्तन या द्वन्द्व या क्षति के कारण यह स्थिति अचानक ही उत्पन्न होती है। अतिनिद्रा में प्रमुख रूप से थकान एवं शीघ्र ही सोने की इच्छा उत्पन्न होती है तथा सुबह जागने में कठिनाई का अनुभव होता है।

दिन के समय अतिनिद्रा में चार प्रकार के निदान हो सकते हैं—

(i) निद्रा अश्वसन (Sleep Apnea);

(ii) तंद्रालुता (Narcolepsy);

(iii) अज्ञात हेतुक अतिनिद्रा (Idiopathic Hypersomnia);

(iv) मनोजन्य अतिनिद्रा (Psychogenic Hypersomnia)।

(i) निद्रा अश्वसन—एक अनुमान के अनुसार, कार्यरत 30 से 60 वर्ष की आयु के व्यक्तियों में लगभग 4 प्रतिशत पुरुष तथा 2 प्रतिशत महिलाओं में निद्रा अश्वसन घटित होता है (Young et al, 1993)। निद्रा अश्वसन को तीन प्रमुख प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है—

(a) अवरोधी निद्रा अश्वसन (Obstructive Sleep Apnea)—जिसमें आंशिक अन्तर्रोधित वायु मार्ग होता है फिर भी नींद में ही साँस लेने के प्रयास निरन्तर जारी रहते हैं।

(b) केन्द्रीय मूल का निद्रा अश्वसन (Sleep Apnea of Central Origin)—जो केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र द्वारा श्वसन प्रयास तंत्र को क्रियाशील करने की क्षणिक विफलताओं के द्वारा उत्पन्न होता है।

(c) मिश्रित प्रकार का निद्रा अश्वसन (Sleep Apnea of Mixed Type)—जिसमें एक आंशिक रूप में अन्तर्रोधित वायु मार्ग की उपस्थिति में एक आरम्भिक विराम के पश्चात् साँस लेने का प्रयास होता है। क्रियात्मक रूप में मिश्रित प्रकार का निद्रा अश्वसन अवरोधी निद्रा अश्वसन के समान ही होता है।

निद्रा अश्वसन की सामान्य विशेषताएँ

- तेज खर्राटे
- विघटित निद्रा
- रात्रिकालीन साँस फूलना एवं दम घुटना
- प्रामाणिक अश्वसन
- दिवाकालिक अतिनिद्रा एवं थकान
- रोधित वायुमार्ग

दिन के समय अतिनिद्रा वाले रोगियों में निद्रा अश्वसन सबसे प्रमुख निदान है। अवरोधी निद्रा अश्वसन के लिए मोटापा एक प्रमुख जोखिमपूर्ण कारक है। इसके अतिरिक्त, शोध अध्ययनों से यह पता चला है कि अवरोधी निद्रा अश्वसन पुरुषों, अधिक उम्र के व्यक्तियों तथा सिर एवं चेहरे सम्बन्धी असंगतियों वाले व्यक्तियों में भी अधिक घटित होता है इस रोग का पारिवारिक सम्बन्धी भी पाया गया है और प्रमाण यह

संकेत करते हैं कि ये पारिवारिक प्रभाव वंशानुगत एवं पर्यावरणीय दोनों ही होते हैं (Guilleminault et al, 1989)। अवरोधी निद्रा अश्वसन में वायुमार्ग के निपात के कारण श्वसन-प्रयासों में वृद्धि होती है जिसके कारण व्यक्ति जाग जाता है। हालांकि व्यक्ति को नींद में जागने की घटनाओं की बाद में स्मृति रह जाती है और नहीं भी। रोगी इस तरह की नींद में बारम्बार जागने जैसी अवस्था में पहुँच सकता है। हालांकि पूर्ण जागृति नहीं होती है।

नींद में अव्यवस्थित श्वसन की दशा में तेज खर्राटे एवं तीव्र अश्वसन की सौ से अधिक घटनाएँ शामिल होती हैं जिसके कारण व्यक्ति में ऑक्सीजन संतृप्ति में ह्रास उत्पन्न होता है। केन्द्रीय मूल के निद्रा अश्वसन की घटनाएँ बहुत कम ही घटित होती हैं। अधिकांश उदाहरण अवरोधी निद्रा अश्वसन के ही मिलते है। रोगी दिन के समय निद्रा के दौरों (आक्षेपों) एवं रात्रि के समय बार-बार नींद खुल जाने का इतिहास बताता है। नींद खुलने के बाद फिर नींद आ जाती है तथा रोगी तेज खर्राटे लेता है तथा साँस फूलने या जल्दी-जल्दी साँस लेने की ध्वनियाँ उत्पन्न होती है (Kales et al, 1980, 1987; Guilleminault & Demet, 1978)।

अधिकांश घटनाओं में रोगी के कमरे में सोने वाला व्यक्ति उसके खर्राटों, साँस फूलने की ध्वनियों एवं अश्वसन का प्रेक्षण करता है। कुछ रोगियों को रात में दम घुटने या साँस अवरुद्धता के अनुभव का ज्ञान रहता है। इनमें नींद की दशा में अत्यधिक शारीरिक गतियाँ, स्वेदलता, प्रातःकालीन सिर दर्द, अनुषंगी असंयत मूत्रता एवं यौन नपुंसकता भी उत्पन्न हो सकते हैं।

लाक्षणिक अवरोधी निद्रा अश्वसन के अधिकांश रोगियों में मध्यम सार्वदैहिक उच्च रक्तचाप तथा मोटापा भी होता है। अल्पआक्सीयता (hypoxia) एवं CO_2 के कारण एवं रात्रिकालीन विखण्डित नींद के कारण सार्वदैहिक उच्च रक्तचाप, भारवृद्धि, अव्यवस्थित शर्करा चयापचय, अन्य हृदय रोग तथा संज्ञानात्मक ह्रास भी उत्पन्न हो सकते हैं।

(ii) तंद्रालुता—तंद्रालुता एक गम्भीर नैदानिक समस्या है और सामान्यतः यह 25 वर्ष की आयु के पहले ही आरम्भ हो जाती है तथा फिर पूरे जीवन काल में बनी रहती है। इस रोग का घटनाक्रम लगभग 1 व्यक्ति प्रति हजार है और यह पुरुषों एवं महिलाओं, दोनों में ही समान दर से घटित होती है।

तंद्रालुता दिन के समय अतिनिद्रा की दशा तथा अनिवार्य निद्रा-दौरों से विशेषीकृत होती है और सामान्यतः इसमें तीन अतिरिक्त लक्षण भी उत्पन्न होते हैं—निस्पंदवात (catelepsy), निद्रा पक्षाघात (sleep paralysis) एवं निद्राकारी विभ्रम (hypnagogic hallucinations) (Roth, 1980; Kales et al, 1987)। निद्रा के आक्षेपों की अवधि कुछ सेकण्डों से लेकर आधे घण्टे तक की हो सकती है तथा यह किसी भी प्रकार के निरुद्योगी एवं उबाऊ या एक-रस क्रिया के कारण उत्पन्न हो सकती है। जैसे—गाड़ी चलाते हुए, व्याख्यान सुनते हुए और कभी-कभी भोजन ग्रहण करते हुए भी। दिन के समय अतिनिद्रा एवं निद्रा-दौरे इस विकृति के आरम्भिक परिलक्षण है तथा इसके अतिरिक्त लक्षण कई वर्ष बाद उत्पन्न होते हैं। तंद्रालुता के लगभग 3/4 रोगियों में कैटाप्लेक्सी घटित होता है जिसकी विशेषता है—बिना चेतना खोये ही माँसपेशीय नियंत्रण की संक्षिप्त अवधि के लिए अचानक हानि। तीव्र संवेगों, जैसे भय, आश्चर्य हँसी एवं क्रोध से दौरे अवक्षेपित होते हैं।

तंद्रालुता की विशेषताएँ	अतिरिक्त लक्षण	अनुषंगी लक्षण
दिवाकालिक अतिनिद्रा	कैटाप्लेक्सी	चाक्षुष अस्पष्टता
अनिवार्य निद्रा आक्षेप	निद्रा पक्षाघात	द्वि-दृष्टि
असामान्य REM निद्रा	निद्राकारी विभ्रम	स्मृति एवं ध्यान संकेन्द्रण संबंधी कठिनाइयाँ
	विक्षोभित रात्रिकालीन नींद	

निद्रा पक्षाघात एवं निद्राकारी विभ्रमों के प्रसंगों की अवधि संक्षिप्त होती है, लगभग एक मिनट तक या कम और ये जाग्रतता एवं नींद के बीच संक्रमण काल के दौरान उत्पन्न होते हैं। निद्रा पक्षाघात में किसी भी

माँसपेशीय को क्रियाशील कर पाने की असमर्थता का एक क्षणिक या अस्थायी अनुभव निहित होता है। इसमें श्वसन क्रिया चलती रहती है। निद्राकारी विभ्रम स्पष्ट एवं जीवंत होते हैं (सामान्यतः चाक्षुष या श्रव्य) और इनका प्रत्यक्षीकरण विशेषकर नींद में जाते समय होता है। सामान्य जनसंख्या में ये दो लक्षण काफी व्यापक रूप में घटित होते हैं, अतः तंद्रालुता के निदान की दृष्टि से इनका कोई विशेष महत्व नहीं है। तंद्रालुता के लगभग 50% रोगी विक्षोभित रात्रिकालीन नींद की शिकायत करते हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि यही इस विकृति का प्राथमिक रूप में एक सीधा प्रभाव है।

अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि रोगियों के प्रथम स्तर के सम्बन्धियों में इस रोग के उत्पन्न होने की दर 10-50% तक हो सकती है (Honda & Matsuki,1990)। इस रोग में आनुवंशिक कारकों की भूमिका अभी अस्पष्ट ही है क्योंकि समरूप जुड़वों में इस रोग के उत्पन्न होने में उच्च विषमताएँ मिली है। अतः यह सुझाव दिया गया कि इसमें आनुवंशिक एवं प्रतिबल कारकों की संयुक्त भूमिका हो सकती है। प्रतिबलों में संवेगात्मक प्रतिबल को प्रमुख माना गया है।

इस रोग में स्नायु शरीर क्रियाविधि में भी असामान्यताएँ उत्पन्न होती हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि इनका सम्बन्ध निद्रा दौरों एवं अतिरिक्त लक्षणों से होता है। तंद्रालुता के अधिकांश मामलों में निद्रा विन्यास से यह स्पष्ट होता है कि इसमे REM निद्रा नींद उत्पन्न होने के बाद बहुत शीघ्र ही, लगभग 5-10 मिनट में ही उत्पन्न हो जाती है, जबकि सामान्य व्यक्तियों में पहली REM निद्रा के उत्पन्न होने की अवधि नींद आने के लगभग 70-90 मिनट बाद होती है।

(iii) अज्ञात हेतुक अतिनिद्रा—रॉथ (Roth, 1954, 1976, 1980) ने इस विकृति का सर्वप्रथम विवरण दिया था। इस अवस्था में दिवाकाल एवं रात्रिकाल में अत्यधिक निद्रा घटित होती है। जनसंख्या में इसकी व्यापकता अभी तक ठीक-ठीक ज्ञात नहीं है। इस रोग के आरम्भ होने की आयु जीवन के प्रथम दशक से लेकर पाँचवें दशक तक पायी गयी है। हालांकि जीवन के द्वितीय दशक में इसकी दर सबसे अधिक देखी गयी है। इसे "अज्ञात हेतुक केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र अतिनिद्रा' भी कहते हैं तथा इसकी विशेषताएँ होती हैं—स्पष्ट रूप में स्थिर निद्रालुता, लम्बी परन्तु ताज़गी रहित झपकियाँ एवं कभी-कभी नींदभरी मदहोशी। यह रोग चिरकालिक हो सकता है।

इस रोग के कारण अभी तक अज्ञात हैं इसीलिए इसे 'अज्ञात हेतुक अतिनिद्रा' कहा जाता है। फिर अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ है कि इसका एक पारिवारिक आधार हो सकता है। अध्ययनों से यह भी ज्ञात हुआ है कि इसमें डोपामीन के वर्द्धित वर्तन एवं/या सूक्ष्म-प्रभेदकारी अधिवृक्कप्रान्तावस्था, अल्पक्रियाशीलता (subtle hypocortisolism) जैसे स्नायुरसायनिक प्रक्रियाओं की भूमिका हो सकती है। उपर्युक्त स्थितियों के कारण इसमें केन्द्रीय CRH (Corticotropin Releasing Hormone) अल्पता का अनुमान भी किया जा सकता है।

अज्ञात हेतुक अनिनिद्रा की विशेषताएँ

स्पष्ट एवं स्थिर निद्रालुता
दीर्घ रात्रिकालिक नींद
दीर्घ ताज़गीरहित झपकियाँ
नींदभरी मदहोशी
नींद का अतिशीघ्र प्रारम्भ होना
नींद के पश्चात् पूर्णतः जाग्रत होने में कठिनाई का अनुभव

इस विकृति के निदान के लिए यह आवश्यक है कि इसमें तंद्रालुता जैसी अवस्था तो उपस्थित हो परन्तु कैटाप्लेक्सी, निद्राकारी विभ्रम एवं निद्रा पक्षाघात अनुपस्थित हों। ऐसी अवस्था में व्यक्ति औसतन 5 मिनट में ही सो जाता है तथा दिन के समय घटित कई झपकियों की अवधि में कम से कम दो REM निद्राएँ नींद आने के पश्चात् घटित होती हैं।

रोगी की दीर्घ विघ्नरहित एवं ताज़गीरहित रात्रिकालिक नींद की अवधि 20 घण्टे तक की हो सकती है (Roth et al, 1969)। रात्रिकालीन निद्रा-तरंगों के अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ है कि अज्ञात हेतुक अतिनिद्रा में नींद का आरम्भ NREM निद्रा से होता है, REM निद्रा के आरम्भ होने की अवधि सामान्य होती है, निद्रा-अवस्थाओं का चक्र भी सामान्य होता है, परन्तु निद्रा-अवधि में अत्यधिक वृद्धि हो जाती है और नींद घनीभूत तथा प्रभावशाली होती है और इसमें जाग्रतता की अवधि भी अल्प होती है। इन परिणामों से यह संकेत मिलता है कि अज्ञात हेतुक अतिनिद्रा की क्रियाविधि में NREM निद्रा को अवरोधित करने वाले जागरण तंत्र की एक आंतरिक अयोग्यता निहित होती है।

(iv) मनोजन्य अतिनिद्रा—अतिनिद्रा की इस दशा का अज्ञात हेतुक अतिनिद्रा से विभेदन करना अत्यन्त कठिन कार्य है। इसमें दिन एवं रात्रि की अतिनिद्रा तो अज्ञात हेतुक अतिनिद्रा के समान ही होती है परन्तु इसमें अतिनिद्रालुता परिवर्तित होती रहती है और इसका सम्बन्ध मनोचिकित्सकीय लक्षणों से स्पष्ट परिलक्षित होता है। सामान्य व्यक्तियों की तुलना में इस दशा से ग्रस्त व्यक्तियों में नींद का आरम्भ (दिन एवं रात्रि दोनों समय) औसतन विलम्बित होता है।

दिवाकालिक अतिनिद्रालुता के परिणाम

दिन के समय अतिनिद्रा के रोगी के निद्रा-जागरण चक्र के काफी दूरगामी परिणाम होते हैं। सम्बन्धित व्यक्ति की मनोसामाजिक क्रियायें, विद्यालयी निष्पादन एवं कार्य-निष्पादन भी गम्भीर रूप से प्रभावित हो सकते हैं। जन सुरक्षा भी खतरे में पड़ सकती है। निद्रालुता-सम्बन्धी दुर्घटनाओं का अर्थव्यवस्था पर भी खराब-प्रभाव पड़ता है और इनका खर्च खरबों रुपये तक अनुमानित है।

(a) मनोसामाजिक क्रियात्मकता—अतिनिद्रालुता का मनोसामाजिक क्रियात्मकता पर गम्भीर प्रभाव पड़ता है। जो व्यक्ति अत्यधिक सोने वाले अथवा असंगत समय पर सो जाते हैं उन्हें अन्य लोग आलसी समझते हैं। ऐसे व्यक्तियों के पारिवारिक जीवन तथा अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्ध विघटित हो जाते हैं। चिरकालिक दिवा काल की अतिनिद्रालुता के कारण मनोरंजक गतिविधियों का आनन्द लेने में भी अवरोध उत्पन्न होता है (Broughton et al, 1981)। इसका कारण शायद यह होता है कि दिन के समय अतिनिद्रा के साथ विषाद विकृति के लक्षण भी पाये जाते हैं (Broughton et al, 1981)। चूँकि अतिनिद्रा से ग्रस्त व्यक्ति स्वयं को रोगी नहीं मानते, अत: उनमें उपस्थित विषाद विकृति का निदान भी वर्षों तक नहीं हो पाता है। बच्चों में दिवाकालिक अतिनिद्रालुता से अधिगम अयोग्यताएँ (Navelet et al, 1976), स्मृतिह्रास एवं मन्द संज्ञानानात्मक प्रक्रियायें (Bedard et al, 1991) भी सहसम्बन्धित होते हैं। दिवाकालिक सतर्कता में ह्रास के कारण ये अयोग्यताएँ उत्पन्न होती हैं (Bedard et al, 1991)।

(b) दुर्घटना का जोखिम—निद्रालुता एवं दुर्घटनाओं में सम्बन्ध पर हुए अधिकांश कार्य मोटरगाड़ियों की दुर्घटनाओं पर केन्द्रित रहे हैं। सामान्य व्यक्तियों में तीव्र निद्रालुता मध्यरात्रि एवं भोर में उत्पन्न होती है तथा निद्रा का दूसरा चरण दोपहर में उत्पन्न होता है (Richardson et al, 1982; Carskadon & Dement, 1987)। मोटरगाड़ियों से सम्बन्धित दुर्घटनाओं का वितरण भी निद्रालुता के चक्र से सम्बन्धित पाया गया है (Mitler et al, 1988) अर्थात् निद्रालुता की अवधि में अधिक दुर्घटनाएँ होती हैं।

(c) कार्य एवं विद्यालयी निष्पादन—दिवाकालिक अति निद्रालुता के रोगी अक्सर विद्यालय में एवं कार्य स्थल पर उत्पादकता में ह्रास का प्रदर्शन करते हैं। तंद्रालुता के अधिकांश रोगी भी यह मानते हैं कि उनके लक्षणों के कारण उनके व्यावसायिक निष्पादन में गिरावट होती है। शैक्षणिक परिस्थितियों में भी तंद्रालुता के 50% से अधिक रोगी अपने खराब शैक्षणिक निष्पादन के लिए स्वयं के लक्षणों को ही दोषी मानते हैं (Alaia, 1992)।

(d) आर्थिक एवं जन स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्यायें—अत्यधिक निद्रा से ग्रस्त व्यक्तियों के ह्रासित योग्यताओं के कारण उनके सामान्य ढंग से कार्य न कर पाने के कारण कई आर्थिक एवं जन स्वास्थ्य सम्बन्धी पेचीदगियाँ भी उत्पन्न होती हैं। अतिनिद्रा एवं तंद्रालुता के कारण मानवीय कष्ट एवं जीवन हानि तो होते ही हैं साथ ही ऐसा अनुमान किया जाता है इसके कारण प्रति वर्ष अरबों डॉलर का खर्च भी बढ़ जाता है। निद्रालुता जब जन सुरक्षा के लिए खतरा बन जाये तब यह जन स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्या बन जाती है।

दुर्घटनाओं के होने पर सम्बन्धित निद्रालु व्यक्ति न सिर्फ अपने शरीर का नुक़सान करते हैं वरन् इसके कारण अन्य लोग भी गम्भीर रूप से चोटिल होते हैं।

चिकित्सा

प्राथमिक अतिनिद्रा की चिकित्सा मुख्यत: उत्तेजक औषधियों, जैसे ऐम्फीटामीन (Amphetamines) से की जाती है जिसे रोगी को सुबह या शाम को सेवन करने के लिए दिया जाता है। इसमें अशामक विषाद प्रतिरोधी, जैसे SSRIs से भी लाभ हो सकता है।

निद्रालुता की चिकित्सा—निद्रालुता को पूरी तरह से ठीक करने के लिए कोई चिकित्सा उपलब्ध नहीं है परन्तु इसमें लक्षणों का प्रबंधन सम्भव है। कुछ रोगियों में नियमित समय अन्तरालों पर बाध्यकारी क्षणिक-नींदों (naps) से लाभ होता है।

भेषज चिकित्सा—तंद्रालुता की चिकित्सा में एक अल्फा$_1$-एड्रिनर्जिक प्रचालक (α_1-adrenergic agonist), मोडाफिनिल (Modafinil) को लाभकारी पाया गया है और यह नींद के दौरों की संख्या में कमी करता है तथा व्यक्ति के मनोगतिकीय निष्पादन में सुधार करता है। इस रोग की चिकित्सा में SSRIs का प्रयोग भी किया जाता है। मोडाफिनिल के अतिरिक्त इमिप्रामीन एवं फ्लूऑक्सेटीन भी लाभकारी पाये गये हैं।

3. परानिद्राएँ
[PARASOMNIAS]

परानिद्राएँ असामान्य एवं अवांछनीय क्रियायें हैं जो नींद की अवस्था में अचानक उत्पन्न होती हैं अथवा ये नींद एवं जाग्रत अवस्था की देहली पर उत्पन्न होती हैं। परानिद्रायें सामान्यत: नींद की तीसरी एवं चौथी अवस्थाओं में ही उत्पन्न होती हैं। आज परानिद्राओं के कई प्रकार ज्ञात हैं जिनमें से कुछ REM निद्रा में भी उत्पन्न होती हैं। परानिद्राओं को व्यवहार, अनुभवों या शरीरक्रियात्मक परिवर्तनों के बारम्बार प्रसंगों या दौरों के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो प्रमुख रूप में या सिर्फ नींद की अवधि में उत्पन्न होती हैं। इनमें से कुछ प्राथमिक निद्रा घटनाएँ हैं और अन्य को अनुषंगी घटनाएँ माना जा सकता है क्योंकि ये चिकित्सकीय या मनोचिकित्सकीय विकृतियों की अभिव्यक्ति होती हैं। हालांकि निद्रा विकृतियों के अन्तर्राष्ट्रीय वर्गीकरण (International Classification of Sleep Disorders or ICSD) के अनुसार, परानिद्राओं के अनेक प्रकार होते हैं परन्तु हम यहाँ सिर्फ उन्हीं परानिद्राओं का वर्णन करेंगे जिनके लक्षण नाटकीय होते हैं तथा जिनके कारण ग्रस्त व्यक्ति परेशानी का अनुभव करता है। परानिद्राओं को मुख्यत: दो वर्गों में रखा जा सकता है—"जागरण विकृतियाँ' (Arousal Disorders) एवं "REM निद्रा व्यवहार विकृति' (REM Sleep Behavior Disorder)। वैसे तो बच्चों में जागरण विकृतियाँ सामान्य रूप से घटित होती हैं परन्तु इनसे वयस्क व्यक्ति भी अछूते नहीं हैं। यहाँ सक्रियता का अर्थ पूर्ण जाग्रत अवस्था से नहीं है वरन् इस दशा में व्यक्ति आंशिक रूप से ही जाग्रत रहता है तथा वह गहन NREM निद्रा की अवस्था में ही रहता है। सक्रियता विकृतियों के तीन प्रकार बताए गये हैं—

(i) भ्रांतिपूर्ण जागरण (Confusional Arousals);

(ii) निद्राभ्रमण विकृति (Sleep Walking Disorder or Somnambulism);

(iii) निद्रा आतंक विकृति (Sleep Terror Disorder)।

इसके अतिरिक्त "दु:स्वप्न विकृति' (Nightmare Disorder) भी एक प्रकार की परानिद्रा है परन्तु यह REM निद्रा की अवस्था में उत्पन्न होती है।

(i) भ्रांतिपूर्ण जागरण—इस प्रकार की जागरण विकृति मुख्य रूप से शिशुओं एवं छोटे बच्चों में उत्पन्न होती है। इस विकृति का एक प्रसंग अंग-विक्षेप एवं सिसकियों या कराहों से आरम्भ होता है तथा फिर इसका विकास बेचैनी भरी उत्तेजना एवं भ्रांतिपूर्ण व्यवहार में होता है जिसमें चिल्लाना (रोना), पुकारना एवं पीटना/पटकना जैसे व्यवहार सम्मिलित होते हैं। हालांकि इस अवस्था में बच्चा सतर्क प्रतीत होता है परन्तु उसको बुलाने पर या उससे बात करने पर बच्चा विशिष्ट रूप में अनुक्रिया नहीं करता है और यदि उससे

बलपूर्वक बात करने की कोशिश की जाये अथवा उसकी इस दशा में अवरोध उत्पन्न किया जाये तब वह इसका प्रतिरोध करता है तथा उसकी उत्तेजना में वृद्धि होती है।

भ्रांतिपूर्ण जागरण की विशेषताएँ

NREM निद्रा में प्रारम्भ

प्रारम्भ : अंग-विक्षेप या सिसकियाँ/कराहना

बेचैनी भरी उत्तेजना

भ्रांतिपूर्ण व्यवहार : चिल्लाना/रोना

पुकारना

पीटना/पटकना

बाह्य उद्दीपक के प्रति अनुक्रिया का अभाव

इस प्रकार के भ्रांतिपूर्ण जागरण की स्थितियों में अक्सर माता-पिता अति आशंकित हो जाते हैं, वे बच्चे को सांत्वना देना चाहते हैं, वे बच्चे को जगाने के तेज प्रयास करते हैं, परन्तु उन्हें सफलता नहीं मिलती है अथवा अत्यन्त कठिनाई से बच्चे को जगा पाते हैं। इस प्रकार के प्रयासों से जाग्रतता विलम्बित होती है तथा यदि बच्चा कुछ अंश तक जाग्रत हो भी हो जाता है तो वह भ्रमित एवं भयभीत हो जाता है। इस प्रकार के प्रत्येक प्रसंग की अवधि 5-15 मिनट (और कभी-कभी अधिक अवधि की भी) तक की हो सकती है जिसके पश्चात् बच्चा स्वत शांत हो जाता है और फिर वह आरामपूर्ण निद्रा में पहुँच जाता है। यह विकृति 'मंद तरंग निद्रा' की अवधि में उत्पन्न होती है।

वयस्कों को यदि गहन निद्रा की अवस्था में जगा दिया जाये तब उनमें भी इस प्रकार का भ्रमपूर्ण जागरण (निद्रा मदहोशी) उत्पन्न हो सकता है। इस प्रकार के गहन निद्रा के कारण होते हैं—औषधीय प्रभाव, निद्रा वंचना से प्रभावमुक्तता एवं अति निद्रालुता से अभिचित्रित निद्रा विकृतियाँ या असामान्य सर्केडियन निद्रा-जागरण विन्यास।

अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि भ्रांतिपूर्ण जागरण वयस्कों में भी घटित होता है। एक अध्ययन में इसकी व्यापकता की दर 4.2% तक पायी गयी है तथा यह पुरुषों एवं महिलाओं में समान दर से उत्पन्न होती है। इसकी व्यापकता 15-24 वर्ष की आयु वर्ग में सबसे अधिक पायी गयी है तथा आयु में वृद्धि के साथ-साथ इसके घटनाक्रम में कमी पायी गयी है।

(ii) निद्रा भ्रमण विकृति— इस विकृति में जटिल व्यवहारों का एक क्रम होता है जो गहन NREM निद्रा की अवस्था (3 एवं 4 स्तर) में बार-बार उत्पन्न होता है। यह विकृति अधिकांशत: बच्चों में ही उत्पन्न होती है। हालांकि वयस्क व्यक्ति भी इससे ग्रस्त होते हैं। चार से आठ वर्ष की आयु के लगभग 17% बच्चों में यह विकृति उत्पन्न होती है। एक अध्ययन के अनुसार, यह विकृति लगभग 2% लोगों में उत्पन्न होती है तथा पुरुषों एवं महिलाओं में इसकी व्यापकता की दर समान है। आयु में वृद्धि के साथ-साथ इसकी व्यापकता की दर में कमी आती है।

निद्रा भ्रमण की विशेषताएँ

- NREM निद्रा में प्रारम्भ, नींद में ही बिस्तर में उठकर बैठ जाना, चलना-फिरना, वस्त्र धारण करना, प्रसाधन का प्रयोग करना।
- बातचीत करना, घर से बाहर जाना, इत्यादि।
- फिर आकर बिस्तर में सो जाना।
- नींद में दुर्घटना।
- सुबह सोने के नियत स्थान से कहीं और सोते हुए पाया जाना।
- सुबह इन घटनाओं की स्मृति नहीं रहना।

इस विकृति से ग्रस्त बच्चे बिस्तर में उठ कर बैठ जाते हैं और बिस्तर में ही इधर-उधर चल-फिर सकते हैं। कुछ बच्चे अपने माता-पिता के कमरे तक जा सकते हैं। इस रोग से ग्रस्त व्यक्ति कभी-कभी परिरक्षित गतिक क्रियाएँ करता है। जैसे—चलना, वस्त्र धारण करना, प्रसाधन का प्रयोग करना, बात करना, चीखना, घर के गलियारों में चलना, कभी-कभी घर के बाहर तक चले जाना। कुछ व्यक्ति इस स्थिति में गाड़ियाँ तक चलाते हैं।

निद्रा भ्रमण की दशा में व्यक्ति के चेहरे पर रिक्तता का भाव रहता है, वह आसपास की परिस्थितियों से असम्बद्ध प्रतीत होता है, उसकी क्रियाओं या गतिविधियों में अनाड़ीपन तथा लक्ष्य का अभाव होता है। यह अवस्था कई मिनट तक बनी रहती है। ऐसी क्रियाओं को करने के बाद व्यक्ति फिर से आकर बिस्तर में सो जाता है। जागने के पश्चात् उसे अपनी इन क्रियाओं की स्मृति नहीं रहती है। कभी-कभी निद्रा भ्रमण की दशा में ही व्यक्ति जाग जाता है, तब वह काफी समय तक दुविधा एवं भ्रम की स्थिति में रहता है। गहन निद्रा के स्तर 4 में व्यक्ति को कृत्रिम रूप से जगाने पर भी कभी-कभी निद्रा भ्रमण की दशा उत्पन्न होती है।

कभी-कभी बच्चे निद्रा भ्रमण की अवस्था में ही घर के अन्य स्थानों पर जाकर सो जाते हैं, अनुपयुक्त स्थानों पर मूत्र-त्याग करते हैं, जटिल मार्गों पर भी चल देते हैं तथा जटिल आदतीय व्यवहारों का भी प्रदर्शन करते हैं।

इस रोग में किसी स्नायुविकृति एवं किसी मनोवैज्ञानिक समस्या से इनकार नहीं किया जा सकता है। अक्सर प्रतिबलपूर्ण परिस्थितियों के बाद निद्रा भ्रमण अधिक उत्पन्न होता है। अत्यधिक थकान एवं निद्रा वंचन के कारण निद्रा भ्रमण के प्रसंग अधिक उत्पन्न होते हैं। कभी-कभी यह विकृति जोखिमपूर्ण हो जाती है क्योंकि निद्रा भ्रमण की दशा में दुर्घटना होने की सम्भावना अधिक होती है। व्यक्ति सीढ़ियों से नीचे गिर सकता है, दीवारों एवं खिड़कियों या घर की अन्य वस्तुओं से टकरा सकता है अथवा घर के बाहर सड़क पर भी दुर्घटनाग्रस्त हो सकता है।

(iii) निद्रा आतंक विकृति—NREM निद्रा की पहली तिहाई अवधि में आंशिक जागरण निद्रा आतंक की विशेषता है। अधिकांशत: इसमें व्यक्ति चीखकर या रोकर, उठ बैठता है या दौड़ पड़ता है, साथ ही उसमें तीव्र गतिपेशीय क्रियायें भी उत्पन्न हो सकती हैं। व्यक्ति किसी भी आयु का हो, वह भयभीत प्रतीत होता है, आँखें घूरती-सी लगती हैं। यह अवस्था कुछ मिनट तक ही रहती है। उसके पश्चात् व्यक्ति फिर से सो जाता है और सब कुछ सामान्य हो जाता है। पूर्णत: जागने पर उसे घटना की स्मृति नहीं रहती है, वह सिर्फ एक डर या ख़तरे के प्रतिबिम्ब का विवरण दे पाता है। सामान्यत: निद्रा आतंक विकृति बाद में निद्रा भ्रमण (स्वप्नचरिता) में परिवर्तित हो जाती है।

निद्रा आतंक विकृति की विशेषताएँ

- NREM निद्रा की पहली तिहाई में प्रारम्भ
- आंशिक रूप से जाग्रत प्रतीत होना
- चीखकर/रोकर उठ बैठना/दौड़ पड़ना
- तीव्र गतिपेशीय क्रियायें
- भयभीत घूरती आँखें
- तीव्र स्वेदन एवं धड़कन/नाड़ी गति
- अन्तत: सो जाना
- अवधि—कुछ मिनट
- जागने पर घटना की स्मृति न होना
- सिर्फ एक खतरे या डर का आभास होना

यह विकृति बच्चों में अधिक उत्पन्न होती है। लगभग 1-6 प्रतिशत (औसत 3 प्रतिशत) बच्चों में यह विकृति उत्पन्न होती है। यह मुख्यत: बाल्यावस्था के अन्तिम वर्षों तथा किशोरावस्था में उत्पन्न होती है। लगभग 1 प्रतिशत वयस्क लोग इससे ग्रस्त होते हैं। अगर यह विकृति 7 वर्ष की आयु के पहले ही उत्पन्न हो जाती है तब फिर सामान्यत: यह लगभग 4 वर्ष तक बनी रहती है। यह विकृति जितनी अधिक आयु में उत्पन्न होती है उतनी ही अधिक आयु तक इसके सतत् बने रहने की सम्भावना होती है। यह विकृति लड़कियों की तुलना में लड़कों में अधिक उत्पन्न होती है। इस विकृति का पारिवारिक सम्बन्ध भी पाया गया है। निद्रा आतंक विकृति का सम्बन्ध भी किसी स्नायुविक असामान्यता से हो सकता है। जब कभी निद्रा आतंक किशोरावस्था या वयस्कावस्था में उत्पन्न होता है तब इसे शंखखण्ड अपस्मार का प्रथम लक्षण माना जाता है। हालांकि व्यक्ति में शंखखण्ड अपस्मार के कोई भी नैदानिक अथवा EEG अभिलेख प्रमाण प्राप्त नहीं होते हैं। सामान्यत: डायजेपाम की अल्प मात्रा से चिकित्सा करने पर लाभ मिलता है और कभी-कभी रोगी पूरी तरह से ठीक से हो जाता है।

चिकित्सा—इसमें प्रतिबलपूर्ण पारिवारिक परिस्थिति की पहचान करना महत्वपूर्ण होता है तथा वैयक्तिक या परिवार चिकित्सा की आवश्यकता पड़ सकती है। कुछ उदाहरणों में डायजेपाम की अल्प मात्रा के प्रयोग से स्थिति में सुधार होता है और कभी-कभी रोगी पूर्णत: रोगमुक्त हो जाता है।

हेतुक कारक

(i) आनुवंशिक कारक—ऐसा माना जाता है कि निद्रा भ्रमण एवं निद्रा आतंक विकृतियों का पारिवारिक आधार होता है। इन विकृतियों के पारिवारिक घटनाक्रम के अध्ययनों के आधार पर केल्स एवं अन्य (Kales et al., 1980 a) ने यह परिकल्पना प्रस्तुत की कि निद्रा भ्रमण एवं निद्रा आतंक विकृतियों के समान वंशानुगत आधार हो सकते हैं। हालांकि इनके नैदानिक लक्षणों की अभिव्यक्ति में पर्यावरणीय कारकों की भूमिका हो सकती है। जुड़वाँ अध्ययनों में बाल्यावस्था तथा वयस्कावस्था दोनों में ही, विषमरूप जुड़वों की तुलना में समरूप जुड़वों में निद्रा भ्रमण विकृति के उत्पन्न होने की दर उच्च पायी गयी है। इसी प्रकार, निद्रा भ्रमण से ग्रस्त व्यक्तियों के बच्चों में भी निद्रा भ्रमण, निद्रा आतंक एवं निद्रा वाक्चरिता अधिक पाये गये हैं (Abe et al,1984)। हाल ही के अध्ययनों से यह संकेत मिले हैं कि इन विकृतियों के उत्पन्न होने में कुछ गुणसूचीय निधानों (loci) की भूमिका हो सकती है।

(ii) मनोविकारी कारक—सभी अध्ययन इस बात से सहमत नहीं है कि परानिद्राओं के उत्पन्न होने में मनोवैज्ञानिक कारकों की भूमिका होती है। एक अध्ययन में निद्रा भ्रमण से ग्रस्त व्यक्तियों के मनोविकारी स्थिति का अध्ययन किया गया और यह पाया गया कि निद्रा भ्रमण से ग्रस्त व्यक्तियों में मनोविकृतियों का उच्च स्तर उपस्थित था तथा उनमें नैदानिक लक्षणों की अभिव्यक्ति भी तीव्र थी। इनमें से 72 प्रतिशत व्यक्तियों में व्यक्तित्व विकृति का निदान किया गया। इन व्यक्तियों में आक्रामकता एवं क्रोध को नियंत्रित करने सम्बन्धी समस्यायें भी उपस्थित थीं (Kales et al, 1980 b)। एक अन्य अध्ययन में निद्रा भ्रमण से ग्रस्त व्यक्तियों की तुलना में निद्रा आतंक से ग्रस्त व्यक्तियों में चिन्ता, मनोग्रस्तता-बाध्यता, दुर्भीतियों एवं विषाद के लक्षणों का उच्च स्तर पाया गया। इस अध्ययन से यह भी ज्ञात हुआ कि इनमें आक्रामकता को बाहर अभिव्यक्त करने में एक प्रकार का अवरोध भी उपस्थित था (Kales, 1980 c)। शोधकर्ताओं ने यह निष्कर्ष प्रस्तुत किया कि बाल्यावस्था में निद्रा भ्रमण एवं निद्रा आतंक विकृति का सम्बन्ध प्राथमिक रूप से वंशानुगत एवं विकासात्मक कारकों से हो सकता है, जबकि यदि ये वयस्कावस्था में भी जारी रहते हैं तब ये मनोविकारी कारकों से सम्बन्धित हो सकते हैं। निद्रा आतंक से ग्रस्त 50 प्रतिशत से अधिक व्यक्तियों में विकृति के आरम्भ के समय जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं के घटने के भी साक्ष्य मिले हैं।

(iii) मनोशरीरक्रियात्मक कारक—सभी जागरण परानिद्राओं में भ्रांतिपूर्ण जागरण उत्पन्न होने की एक प्रवृत्ति पायी जाती है और इसलिए परानिद्राओं के विकारी शरीरक्रिया में पूर्वप्रवण कारक हो सकते हैं जैसे- (1) गहन नींद के लिए वंशानुगत रूप से निर्धारित एक प्रवृत्ति हो सकती है या (2) ऐसे सहायक कारक हो सकते हैं जो गहन एवं मंद तरंग नींद में वृद्धि करते हों या (3) विमोचकीय कारक, जो निद्रा विखण्डन में वृद्धि करते हैं, यथा प्रतिबल, पर्यावरणीय या अन्तर्जात उद्दीपक और उत्तेजक पदार्थ।

हालांकि सामान्यत: निद्रा भ्रमण एवं निद्रा आतंक दोनों के ही नींद की पहली तिहाई में उत्पन्न होने के प्रमाण हैं फिर भी इन परानिद्राओं को रात्रिकालीन निद्रा की अवधि में 'मंद तरंग नींद' एवं 'द्वितीय अवस्था

नींद' में भी उत्पन्न होने के प्रमाण मिले हैं (Kavery et al, 1990)। निद्रा आतंकों की तीव्रता का सम्बन्ध निद्रा की चौथी अवस्था की अवधि से भी पाया गया है एवं निद्रा आतंक घटित होने पर 'चौथी अवस्था नींद' की अवधि दीर्घ हो जाती है (Fisher et al, 1973)।

(iv) दु:स्वप्न विकृति—दु:स्वप्नों में अत्यन्त डरावने सपने आते हैं जिसके कारण व्यक्ति सीधे ही जाग जाता है। एक अनुमान के अनुसार, सामान्य जनसंख्या में दु:स्वप्नों की व्यापकता एक समय में 4-8 प्रतिशत तक बतायी गयी है। अन्य अध्ययनों में इसकी व्यापकता 3-4 प्रतिशत तक ही अनुमानित है। पुरुषों की तुलना में महिलाओं में दु:स्वप्न अधिक उत्पन्न होते हैं।

दु:स्वप्नों में लम्बी अवधि के डरावने सपने आते हैं जिसके कारण व्यक्ति डरकर जाग जाता है। अन्य सपनों की तरह ही दु:स्वप्न भी REM निद्रा की अवधि में और प्रमुख रूप से दीर्घ निद्रा की अवधि में ही उत्पन्न होते हैं। दु:स्वप्नों का सम्बन्ध अवसर ही आक्रमण, गिरने या मृत्यु के डर से होता है और कई रोगियों में सपनों की विषयवस्तु बारम्बार वही रहती है (Kales et al, 1987)। कुछ व्यक्तियों में पूरे जीवन काल में दु:स्वप्न उत्पन्न होते हैं और कुछ अन्य व्यक्तियों में रोगग्रस्तता अथवा प्रतिबलपूर्ण घटनाओं के पश्चात् दु:स्वप्नों का अनुभव होता है। इससे ग्रस्त व्यक्ति निद्रा में अत्यधिक विघ्न बताते हैं तथा उन्हें सपनों की विषयवस्तु की विस्तारित स्मृति भी रहती है, जबकि निद्रा आतंक में व्यक्ति को सपनों की विषयवस्तु की स्मृति नहीं रहती है।

आघातपूर्ण घटनाओं के बाद दु:स्वप्न उत्पन्न हो सकते हैं। दु:स्वप्नों का सम्बन्ध अन्य निद्रा विकृतियों से भी पाया गया है। कुछ औषधियों से भी दु:स्वप्न उत्पन्न होते हैं और इनमें SSRIs औषधियाँ प्रमुख हैं। दु:स्वप्नों का सम्बन्ध अनिद्रा से ग्रस्त ऐसे व्यक्तियों से पाया गया है जिनमें चिंता एवं विषादी विकृति भी उपस्थित होती है। प्रतिबल के कारण दु:स्वप्नों की बारम्बारता में वृद्धि होती है तथा मनस्तापियता का सम्बन्ध भी दु:स्वप्नों से पाया गया है।

चिकित्सा—जिन औषधियों, जैसे ट्राइसाइक्लिक औषधियों से REM निद्रा दमित होती है। उनके प्रयोग से दु:स्वप्नों की बारम्बारता में कमी आ सकती है। इस विकृति में बेन्जोडायजेपीन के प्रयोग से भी लाभ होता है।

4. निद्रा-जागरण योजना में विक्षोभ

[SLEEP-WAKE SCHEDULE DISORDER]

इस विकृति में व्यक्ति में वांछित सर्केडियन अवधि से निद्रा का प्रतिस्थापन हो जाता है। रोगी जब सोना चाहता है, उस समय उसे नींद नहीं आती है बल्कि उसे किसी और समय नींद आती है। हालांकि इनमें निद्रा की मात्रा सामान्य ही रहती है। ये रोगी जब जाग्रत रहना चाहते हैं तब पूरी तरह से जाग्रत नहीं रह पाते हैं तथा किसी और समय जाग्रत रहते हैं। रोगी में इस विक्षोभ के कारण अनिद्रा या अतिनिद्रा भी उत्पन्न नहीं होती है। हालांकि रोगी इनकी शिकायत कर सकता है। इस विकृति को "सर्केडियन लय निद्रा विकृति' भी कहते हैं। निद्रा विकृति के क्षेत्र में बहुत कम कार्य हुए हैं और विजमैन एवं उनके साथियों ने सर्वप्रथम इस क्षेत्र में कार्य किये (Weitzman et al, 1981)। इसके पश्चात् कुछ अन्य अध्ययन भी हुए जिनके अनुसार यह विकृति बाल्यावस्था एवं किशोरावस्था में सर्वाधिक उत्पन्न होती है। इससे महिलायें एवं पुरुष समान रूप से ग्रस्त होते हैं तथा इस विकृति के उत्पन्न होने में इसके पारिवारिक इतिहास की भूमिका भी हो सकती है।

इस विकृति के छ: प्रकार बताये गये हैं—

(i) विलम्बित निद्रा चरण संलक्षण (Delayed Sleep Phase Syndrome or DSPS)—इस विकृति में निद्रा का प्रमुख प्रसंग वांछित सोने के समय से विलम्बित होता है जिसके कारण "निद्रा-प्रारम्भ अनिद्रा' या वांछित समय पर जागने में कठिनाई जैसे लक्षण उत्पन्न होते हैं।

(ii) अग्रवर्ती निद्रा चरण संलक्षण (Advanced Sleep Phase Syndrome or ASPS)—इस विकृति में निद्रा का प्रमुख समय घड़ी के वांछित समय से पहले हो जाता है जिसके कारण बाध्यकारी सायंकालीन निद्रालुता, अग्रवर्ती निद्रा-प्रारम्भ एवं वांछित समय से पहले ही जाग्रत होने के लक्षण उत्पन्न होते हैं।

(iii) 24-घण्टे विहीन निद्रा-जागरण संलक्षण (Non-24 hr Sleep-Wake Syndrome)—इसमें नींद का "स्वतंत्र क्रियाशील विन्यास' होता है। इसमें समाज में रहने वाले व्यक्ति में नींद आरम्भ होने एवं जाग्रत होने के समय में प्रतिदिन कई घण्टों के विलम्ब वाला एक दीर्घकालिक स्थायी विन्यास उपस्थित होता है।

(iv) अनियमित निद्रा-जागरण विन्यास (असंगठित) (Irregular Sleep-Wake Pattern) (Disorganised)—इसमें निद्रा एवं जागरण के अस्थायी रूप के असंगठित एवं परिवर्ती प्रसंग शामिल होते हैं।

(v) पारी कार्य—इसमें निद्रा-जागरण सम्बन्धी समस्यायें रात्रि/दिवा पारी में कार्य करने से उत्पन्न होती है। अत: यह व्यवसाय/कार्य की प्रकृति से सम्बन्धित होती है।

(vi) जेट विलम्बन (Jet Lag)—इसमें एक समयांचल से दूसरे समयांचल में विमान द्वारा यात्रा करने के कारण व्यक्ति के दिन-रात के समय चक्र में परिवर्तन हो जाता है, परिणामस्वरूप उसमें अस्थायी रूप से निद्रा जागरण लय सम्बन्धी विक्षोभ उत्पन्न होते हैं।

निद्रा-जागरण योजना विक्षोभ से ग्रस्त व्यक्ति अपनी जैविक घड़ी को अभिप्रेरणा एवं शिक्षा द्वारा परिवर्तित कर पाने में असमर्थ होते हैं। इस विकृति में सिर्फ निद्रा-जागरण चक्र ही विचलित नहीं होता है बल्कि व्यक्ति के अन्य सर्केडियन शरीरक्रियात्मक लय जैसेकि मेलाटोनिन एवं शरीर तापक्रम भी विचलित होते हैं और सम्भवत: इन्हीं सर्केडियन चक्रों के कारण ही व्यक्ति अपने निद्रा-जागरण चक्र को परिवर्तित नहीं कर पाता है।

निद्रा-जागरण योजना विक्षोभ से ग्रस्त अधिकांश व्यक्तियों में अधिगम एवं व्यक्तित्व विकृतियाँ भी पायी जाती हैं। अवधान-न्यूनता अतिसक्रियता विकृति में भी निद्रा-जागरण योजना विक्षोभ घटित होते हैं। वैसे विषाद, चिंता एवं पश्च-आघातीय प्रतिबल विकृतियों में निद्रा-जागरण योजना विक्षोभ के लक्षण पाये जाते हैं।

अन्य निद्रा विकृतियाँ

REM निद्रा व्यवहार विकृति (REM Sleep Behaviour Disorder)—यह एक प्रकार की परानिद्रा है जिसकी विशेषताएँ होती हैं—REM निद्रा की अवधि में सपनों से संयुक्त जटिल गतिपेशीय क्रियायें। रोगी में चिल्लाना, चीखना, मुक्का मारना एवं पकड़ना जैसे विस्तारित रात्रिकालीन पेशीय व्यवहार उत्पन्न होते हैं जो स्वयं उसके लिए या बिस्तर में उसके साथ सोने वाले अन्य व्यक्ति के लिए जोखिमपूर्ण हो सकते हैं। कभी-कभी क्षतिपरक व्यवहार (जैसे ठोकर मारना, कूदकर भागना एवं दौड़ पड़ना, जिससे कमरे में रखे अन्य वस्तुओं से टकरा जाना) भी उत्पन्न हो सकते हैं। रोगी के इस प्रकार के व्यवहार के कारण वह स्वयं या उसके साथ सोने वाला व्यक्ति चोटिल हो सकता है। चोटग्रस्त होने पर रोगी अथवा उसके साथ सोने वाला व्यक्ति चिकित्सक के पास पहुँचता है। कभी-कभी रोगी इन क्षतिपरक घटनाओं से बचने के लिए सोते समय स्वयं को बिस्तर में ही बाँध सकता है। इस विकृति से ग्रस्त व्यक्ति स्पष्ट, असुखद एवं घटनाओं से भरपूर सपनों का विशिष्ट विवरण देते हैं जो नींद की अवधि में उत्पन्न पेशीय व्यवहारों के अनुरूप प्रतीत होते हैं। इस विकृति से ग्रस्त व्यक्ति अक्सर ये बताते हैं कि उन पर किसी जानवर ने या अपरिचित व्यक्तियों ने हमला कर दिया है और वे स्वयं की सुरक्षा के लिए लड़ने वाले थे या भाग जाने वाले थे। ऐसा देखा गया है कि ये व्यक्ति नींद की अवस्था में तो हिंसा या आक्रामकता का प्रदर्शन करते हैं परन्तु दिन के समय जाग्रत अवस्था में अक्सर शांत एवं मृदु आचरण वाला स्वभाव प्रदर्शित करते हैं। रोगी अक्सर निद्रा विक्षोभ की शिकायत करते हैं जिसके परिणामस्वरूप वे दिन में अत्यधिक सोते हैं।

यह विकृति मुख्यत: 50 वर्ष से अधिक आयु वाले व्यक्तियों में अत्पन्न होती है और जनसंख्या में इसकी व्यापकता की दर लगभग 0.5 प्रतिशत तक हो सकती है। यह विकृति साईन्यूक्लियोपैथी नामक स्नायुविकासात्मक विकृति के एक वर्ग में अधिक उत्पन्न होती है। इन विकृतियों में प्रमुख हैं—पार्किन्सन रोग, लेवी बाडीज के साथ मनोभ्रंश एवं बहुतंत्रीय अपक्षय। REM निद्रा व्यवहार विकृति के रोगियों में REM निद्रा की अवधि में माँसपेशीय शिथिलता का पूर्ण या आंतरायिक ई.ई.जी. अभाव घटित होता है और REM निद्रा में माँसपेशीयों में चरणबद्ध रूप में अत्यधिक REM क्रियाशीलता भी परिलक्षित होती है। यदि इस विकृति के रोगियों में केन्द्रीय तंत्रिक तंत्र सम्बन्धी कोई भी विक्षति नहीं पायी जाती है तब इसे 'अज्ञात हेतुक REM निद्रा व्यवहार विकृति' कहते हैं।

अध्ययनों से यह संकेत मिले हैं कि इस विकृति के उत्पन्न होने में आधारीय मस्तिष्क में उपस्थित उन कई केन्द्रों की भूमिका हो सकती हैं जो REM निद्रा में माँसपेशीय शिथिलता का नियमन करते हैं।

❖❖

अध्याय—10

भक्षण विकृतियाँ
[EATING DISORDERS]

भक्षण विकृतियाँ उन अति निर्बल करने वाली मनोचिकित्सात्मक विक्षोभों में से एक है जो मुख्यत: महिलाओं को प्रभावित करती हैं। "एक भक्षण विकृति को भक्षण व्यवहार के दृढ़ विक्षोभों अथवा शारीरिक भार को नियंत्रित करने के उद्देश्य वाले ऐसे व्यवहारों के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो व्यक्ति के शारीरिक स्वास्थ्य एवं मनोसामाजिक क्रियाशीलता में सार्थक ह्रास उत्पन्न करते हैं तथा जो एक सामान्य चिकित्सकीय दशा या किसी अन्य मनोचिकित्सकीय विकृति का अनुषंगी लक्षण नहीं होते हैं।" भक्षण विकृतियों में दो प्रमुख विकृतियाँ हैं—

1. मनोजन्य क्षुधाह्रास (Anorexia nervosa);
2. मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति (Bulimia nervosa)।

ये दोनों भिन्न प्रकार के संलक्षण हैं तथा इनका कूट संकेतन डी.एस.एम.-IV-टी.आर. में वयस्क भक्षण विकृतियों के अन्तर्गत किया गया है। ICD-10 में इनको शरीरक्रियात्मक विक्षोभों तथा भौतिक कारकों से सम्बन्धित व्यवहार सम्बन्धी संलक्षण वर्ग के अन्तर्गत वर्गीकृत किया गया है। इन दोनों ही विकृतियों का आरम्भ शायद ही कभी किशोरावस्था के पहले अथवा 25 वर्ष की आयु के पश्चात् होता है। ये दोनों विकृतियाँ प्रमुख रूप से महिलाओं में उत्पन्न होती हैं और समस्त भक्षण विकृतियों से ग्रस्त कुल व्यक्तियों में महिलाओं का प्रतिशत 90-95% तक होता है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि लिंग (gender) से सम्बन्धित कारकों की भूमिका इन विकृतियों में अवश्य हो सकती है।

पुरुषों में ये विकृतियाँ बहुत ही कम देखने को मिलती हैं और इनमें इनके उत्पन्न होने के कारणों के बारे में अभी तक उपलब्ध ज्ञान अपर्याप्त है, परन्तु पुरुष रोगियों के साथ एक विशेष बात अवश्य पायी गयी है कि इन रोगों से ग्रस्त पुरुष रोगी या तो समलिंगी अथवा उभयलिंगी होते हैं। मनोजन्य क्षुधाह्रास एवं मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति के अतिरिक्त 'बिंज भक्षण विकृति' (Binge Eating Disorder) नामक एक और भक्षण विकृति भी डी.एस.एम.-IV-टी.आर. में वर्णित है।

1. मनोजन्य क्षुधाह्रास
[ANOREXIA NERVOSA]

'एनोरेक्सिया' (Anorexa) शब्द की उत्पत्ति ग्रीक भाषा के शब्द आरेक्सिस (Orexis) से हुयी है जिसका अर्थ होता है—भूख की हानि (Loss of appetite)। अत: एनोरेक्सिया नर्वोसा शब्द का अर्थ होता है—'मानसिक (स्नायुविक) प्रकृति का क्षुधाह्रास' या 'मनोजन्य क्षुधाह्रास'। इस संलक्षण की पहचान एक सदी से अधिक समय से है और चिकित्साशास्त्र साहित्य में इसके संलक्षणों का सर्वप्रथम उल्लेख सन् 1870 में मिलता है। इस संलक्षण के आरम्भिक उल्लेखों में शारीरिक भार में कमी, अनार्तव (मासिक धर्म का रुक जाना) (amenorrhea), मनोवैज्ञानिक विक्षोभ एवं बढ़ी हुयी क्रियाशीलता जैसे लक्षण शामिल थे। तब से लेकर आज तक इस विकृति के लक्षणों में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है।

मनोजन्य क्षुधाह्रास की अवस्था में व्यक्ति का व्यवहार शारीरिक भार कम करने, शारीरिक भार-क्षति, शारीरिक वजन एवं भोजन के प्रति पूर्वलिप्तता, भोजन को हाथों से उठाने के विचित्र तरीके, शारीरिक भार वृद्धि के प्रति तीव्र भय, शारीरिक आकृति में गड़बड़ियों एवं अनार्तव की दिशा में निर्देशित होता है। इस रोगी के लगभग आधे रोगी अपने भोजन में कमी कर देते हैं अथवा अत्यधिक व्यायाम करते हैं ताकि शारीरिक वजन में कमी हो सके। शेष आधे रोगी भी भोजन में अत्यन्त कमी कर देते हैं पर शीघ्र ही नियंत्रण खोने के कारण अनियंत्रित भक्षण (Binge eating) में लिप्त हो जाते हैं, तत्पश्चात् वे विरेचकों का प्रयोग करते हैं।

नैदानिक विशेषताएँ

डी.एस.एम.-IV-टी.आर. एवं ICD-10 के अनुसार, मनोजन्य क्षुधाह्रास की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(a) शारीरिक भार वृद्धि के प्रति तीव्र भय एवं सामान्य पोषण को बनाए रखने का परित्याग, साथ ही ग्रस्त व्यक्ति सामान्य या दुबले-पतले होने के बाद भी बार-बार मोटे हो जाने की शिकायत करता है।

(b) आयु एवं ऊँचाई के मानकों के अनुसार सामान्य शारीरिक भार में 15% तक या अधिक की कमी अथवा शारीरिक विकास की अवधि में शरीर भार वृद्धि में अनुमान से कम भार वृद्धि जिसके कारण शारीरिक भार का सामान्य की तुलना में 85% से कम हो जाना।

(c) व्यक्ति में शारीरिक भार में कमी स्वउत्प्रेरित होती है, वह उच्च ऊर्जा वाले भोजन का परिहार करता है, स्वयं की शारीरिक भार एवं आकृति के प्रत्यक्षीकरण में विक्षोभ, जैसे अनुभव करना है कि (वह मोटा हो गया है)। शारीरिक क्षीणता (Cachexia) के दुष्प्रभावों के बावजूद उसमें शारीरिक भार वृद्धि के प्रति तीव्र भय की उपस्थिति।

(d) रज:स्वला महिलाओं में अनार्तव (कम से कम तीन लगातार अवरुद्ध मासिक चक्र)।

इस विकृति के दो उप-प्रकार होते हैं–

(i) प्रतिबंधित प्रकार (Restricting Type);

(ii) अनियंत्रित भक्षण विरेचकीय प्रकार (Binge Eating Purging Type)।

मनोजन्य क्षुधाह्रास के ये दोनों प्रकार एक-दूसरे से अति निकट रूप में सम्बन्धित होते हैं। प्रतिबंधित प्रकार के सभी रोगियों में से लगभग 50% रोगी आगे चलकर "अनियंत्रित भक्षण विरेचकीय प्रकार' में परिवर्तित हो जाते हैं। "प्रतिबंधित प्रकार' के रोगियों की तुलना में "अनियंत्रित भक्षण विरेचकीय प्रकार' के रोगियों के परिवारों में कुछ मोटे लोगों का इतिहास मिलता है अथवा रोग के आरम्भ होने के काफी पहले उनके शरीर का भार अधिक रहा होता है। "अनियंत्रित भक्षण विरेचकीय प्रकार' से ग्रस्त व्यक्तियों का सम्बन्ध द्रव्य-दुर्व्यसन, आवेग नियन्त्रण विकृति एवं व्यक्तित्व विकृति से हो सकता है। "प्रतिबंधित प्रकार' के रोगी चयनित भोजन तथा कैलोरी की अत्यन्त कम मात्रा लेते हैं और वे अक्सर ही भोजन एवं अन्य मामलों के प्रति मनोग्रस्तता-बाध्यता से ग्रस्त रहते हैं। दोनों ही प्रकार के रोगी शारीरिक भार एवं शरीर आकृति की पूर्वधारणा से ग्रस्त रहते हैं तथा अक्सर ही घण्टों व्यायाम एवं विचित्र भक्षण व्यवहार प्रदर्शित कर सकते हैं। दोनों ही प्रकार के रोगी सामाजिक रूप से एकाकी, विषाद के लक्षणों एवं न्यून लैंगिक इच्छा से ग्रस्त हो सकते हैं।

घटनाक्रम

लगभग 4% किशारों एवं युवा वयस्कों में विभिन्न प्रकार की भक्षण विकृतियाँ पायी जाती हैं। पिछले कुछ दशकों में मनोजन्य क्षुधाह्रास के उत्पन्न होने के दर में भारी वृद्धि हुयी है। यह विकृति किशोर वय की युवतियों में अधिक उत्पन्न होती है। इस विकृति के उत्पन्न होने की सामान्य आयु 14-18 वर्ष है। 0.5% से 1% किशोर युवतियों में मनोजन्य क्षुधाह्रास उत्पन्न होने का अनुमान किया जाता है। पुरुषों की तुलना में महिलाओं में यह विकृति 10-20 गुना अधिक उत्पन्न होती है। यह रोग विकसित देशों में अधिक उत्पन्न होता है। यह विकृति उन व्यवसायों से जुड़ी महिलाओं में अधिक उत्पन्न होती है जिनमें दुबले-पतले शरीर एवं आकर्षक शरीर आकृति की माँग होती है। जैसे–मॉडलिंग, नृत्य, फैशन, आदि। यह विकृति खेलकूद से जुड़े लोगों में भी उत्पन्न होती है, विशेषकर लम्बी दूरी के धावकों एवं तैराकों में।

इस विकृति का सम्बनध कई अन्य मनोचिकित्सकीय विकृतियों से भी पाया गया है। विषाद के 65%, सामाजिक दुर्भीति के 34% तथा मनोग्रस्तता-बाध्यता के 26% उदाहरणों से मनोजन्य क्षुधाह्रास का सम्बन्ध पाया गया है। मनोजन्य क्षुधाह्रास की अधिकांश घटनाओं का आरम्भ वैसे तो किशोरावस्था में ही होता है परन्तु यह विकृति बाल्यावस्था में भी उत्पन्न हो सकती है। इस रोग से ठीक होने का अनुमान लगा पाना कठिन

है परन्तु अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ है कि रोग की अवधि अति परिवर्ती होती है। इस रोग से ग्रस्त सभी व्यक्तियों में से लगभग 50% व्यक्ति पूरी तरह रोग मुक्त हो जाते हैं, जबकि 30% व्यक्तियों में इस रोग के लक्षणों की तीव्रता वयस्कावस्था में भी कभी कम तो कभी तीव्र होती रहती है। इस रोग से ग्रस्त 10% रोगियों में यह रोग चिरकाल तक बना रहता है और शेष लगभग 10% रोगियों की अन्ततः मृत्यु हो जाती है।

हेतुक कारक

विभिन्न भक्षण विकृतियों एवं विशेष रूप में मनोजन्य क्षुधाह्रास विकृति के उत्पन्न होने के आधार में कई कारकों की भूमिका हो सकती है। वैसे तो कई कारकों की पहचान की गयी है परन्तु इनमें से किसी का भी इस विकृति से सीधा सम्बन्ध नहीं पाया गया है। इसका एक प्रमुख कारण यह है कि मनोजन्य क्षुधाह्रास का घटनाक्रम बहुत ही कम है जिसके कारण इसके हेतुक कारक सम्बन्धी अध्ययनों की कमी रही है। इस विकृति के संदर्भ में एक ऐसे मॉडल की परिकल्पना की गयी है जिसमें कई जैविक, मनोवैज्ञानिक एवं पर्यावरणीय जोखिमपूर्ण कारक आपस में अन्तर्क्रिया करके इस विकृति को उत्पन्न कर सकते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि जो कारक इस विकृति को आरम्भ करते हैं वो इस विकृति के निरन्तर जारी रखने वाले कारकों से भिन्न होते हैं।

I. जैविक कारक

(i) वंशानुगत एवं पारिवारिक कारक—ऐसे प्रमाण प्राप्त हुए हैं जिनसे ज्ञात होता है कि भक्षण विकृतियों के प्रति सुभेद्यता में वंशानुगत कारकों की भूमिका होती है। भक्षण विकृति से ग्रस्त व्यक्तियों के महिला सम्बन्धियों में मनोजन्य क्षुधाह्रास या मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति के पूरे जीवन काल में उत्पन्न होने की सम्भावना 7-20 गुना अधिक बढ़ जाती है। इसी प्रकार विषमरूप जुड़वों की तुलना में समरूप जुड़वों में मनोजन्य क्षुधाह्रास के उत्पन्न होने की सम्भावना अधिक होती है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि इस विकृति के आरम्भ होने में आनुवंशिक कारकों की भूमिका 50% तक हो सकती है। इसमें सहोदरों द्वारा विशिष्ट प्रकार के अनुभवों की महत्ता को भी स्वीकारा गया है। जैसे—परिवार में जनकों द्वारा सहोदरों के प्रति भिन्न-भिन्न व्यवहार एवं उनके जीवन में भिन्न-भिन्न प्रकार की घटनाओं का घटित होना, आदि। इस विकृति में "मनोग्रस्तता-बाध्यता' जैसी विशेषताओं के उपस्थित होने के प्रमाणों को भी अब समर्थन मिलने लगा है। मनोग्रस्तता-बाध्यता संलक्षणों में 'मनोग्रस्तता-बाध्यता विकृति', मनोग्रस्तता-बाध्यता व्यक्तित्व विकृति एवं शरीरदुषाकृति विकृति शामिल हैं और भक्षण विकृतियों के भी कम से कम सैद्धान्तिक रूप में इनसे सम्बन्धित माना जाने लगा है। इन सभी संलक्षणों में कुछ तात्विकी, सम्बन्धित विशेषताएँ एवं तार्किक रूप से पारिवारिक संचरण भी सहभागी होते हैं। हालांकि ऐसा प्रतीत नहीं होता कि मनोजन्य क्षुधाह्रास का मनोग्रस्तता-बाध्यता विकृति के साथ वंशानुक्रम में संचरण होता है परन्तु ऐसे प्रमाण अवश्य हैं कि मनोजन्य क्षुधाह्रास एवं मनोग्रस्तता-बाध्यता व्यक्तित्व विकृति का वंशानुक्रम में साथ-साथ संचरण होता है (Lilenfeld et al, 1998)। इन अध्ययनों से इस परिकल्पना को पोषण मिला है कि सम्भवतः यह एक ऐसा लक्षण प्ररूप है जिसकी विशेषताएँ होती हैं—सम्पूर्णतावाद (perfectionism), अनम्यता एवं व्यवहार सम्बन्धी प्रतिबंध या लाचारी की प्रवृत्ति और मनोजन्य क्षुधाह्रास इनकी अभिव्यक्तियों में से एक हो सकती है।

इस विकृति के जीन सम्बन्धी आधारों की पहचान के प्रयास भी हुए हैं, विशेषकर सेरोटोनिन धर्मोत्तेजक तंत्र (serotonergic system) (परिवहन एवं संग्राहक तंत्रों का समावेश करते हुए) सम्बन्धी बहुरूपता के लिए जिम्मेदार जीनों का। इसके अतिरिक्त शारीरिक भार एवं भोजन ग्रहण क्रिया का नियमन करने में शामिल जीनों की भूमिका पर भी कार्य हुए हैं, जैसेकि लेप्टिन (leptin) एवं इस्ट्रोजेन संग्राहक (estrogen receptor) से सम्बन्धित जीन। हालांकि इस क्षेत्र में हुए अध्ययनों से कोई ठोस एवं विश्वसनीय परिणाम नहीं प्राप्त हो सके हैं।

(ii) स्नायुरसायन—मनोजन्य क्षुधाह्रास के कुछ रोगियों के मूत्र एवं "वल्कुटीय-सुषुम्नीय द्रव' (cerebrospinal fluid) में MHPG (3-methoxy-4-hydroxyphenylglycol) का घटा हुआ स्तर पाया गया है जो इन रोगियों में नारइपीनेफ्रीन (NE) की न्यूनक्रियाशीलता की ओर संकेत करता है। यह स्थिति

विषाद के ठीक विपरीत स्थिति के समान है। विषाद में MHPG का बढ़ा हुआ स्तर पाया जाता है। मनोजन्य क्षुधाह्रास के रोगियों में भूख की दशा में भी भोजन को अनदेखा करना या भोजन के प्रति अरुचि का कारण अन्तर्जात ओपीऑड्स (endogenous opiods) हो सकते हैं।

मनोजन्य क्षुधाह्रास में उपवास/आहारहीनता के कारण अनार्तव (amenorrhea) उत्पन्न होता है। यह स्थिति इस तथ्य की ओर संकेत करती है कि उपवास की अवस्था में हार्मोन, विशेषकर ल्यूटिनाइजिंग हार्मोन (Luteinizing Hormone or LH), फालिकिल स्टिमुलेटिंग हार्मोन (Follicle Stimulating Hormone or FSH) एवं गोनैडोट्रापिन-रिलीजिंग हार्मोन (Gonadotropine-Releasing Hormone or GRH) का स्तर कम हो जाता है। इसके अतिरिक्त इस्ट्रोजेन एवं प्रोजेस्टेरोन (progesterone) का स्तर भी कम हो जाता है। मनोजन्य क्षुधाह्रास के कुछ रोगी शारीरिक भार में सार्थक कमी के पहले ही अनार्तव से ग्रस्त हो जाते हैं और कुछ रोगियों में शारीरिक भार वृद्धि के बावजूद भी मासिक चक्र पुनः आरम्भ नहीं हो पाता है। इससे यह संकेत मिलता है कि इस रोग में शारीरिक भार सम्बन्धी प्रभावों के अतिरिक्त कुछ अन्य कारकों की भूमिका हो सकती है।

परिकलित टोमोग्रैफी (computed tomography) तकनीक की सहायता से यह ज्ञात हुआ है कि मनोजन्य क्षुधाह्रास की अवस्था में मस्तिष्क की गुहिकाओं (ventricles) के आकार में वृद्धि हो जाती है और एक अन्य अध्ययन में बिंज भक्षण विरेचकीय प्रकार के मनोजन्य क्षुधाह्रास के रोगियों के मस्तिष्क के दाँये अधोवर्ती एवं ऊर्ध्ववर्ती अग्रललाटीय खण्ड एवं पार्श्विक क्षेत्र में चयापचय की उच्च दर पायी गयी है। कुछ अध्ययनों से यह भी संकेत प्राप्त हुआ है कि अधश्चेतक (hypothalamus) के पैरावेन्ट्रीकुलर न्यूक्लियर क्षेत्र (paraventricular nucleus area) में भक्षण व्यवहार को नियन्त्रित करने वाले तीन रसायनों सेरोटोनिन, डोपामीन एवं नारइपीनेफ्रीन में दुष्क्रिया उत्पन्न हो जाती है।

H. मनोसामाजिक कारक

(i) व्यक्तित्व एवं स्वभाव—मनोजन्य क्षुधाह्रास के रोगियों में कुछ व्यक्तित्व शीलगुणों की भी पहचान की गयी है जिनमें प्रमुख हैं—अत्यधिक हानि परिहार, दृढ़ता या सततावृत्ति, अन्तर्विवेकशीलता एवं पूर्णतावाद (perfectionism)। इसके साथ ही मनोजन्य क्षुधाह्रास से मुक्ति पा गयी महिलाओं में भी पूर्णतावाद एवं मनोग्रस्ततकारी लक्षण पाये गये हैं। ये व्यक्तित्व शीलगुण व्यक्ति को मनोजन्य क्षुधाह्रास रोग के प्रति सुभेद्य बन सकते हैं।

जिन लड़कियों एवं नवयुवतियों में मनोजन्य क्षुधाह्रास का विकास होता है। उनमें सामान्यतया निम्नलिखित विशेषताएँ पायी जाती हैं—

- सांवेगिक रूप में अत्यधिक संकोची
- संज्ञानात्मक रूप से अवरुद्ध
- प्रतिदिन व्यवस्थित एवं पूर्वअनुमानित वातावरण को पसंद करना तथा परिवर्तन के प्रति समायोजन में कठिनाई का अनुभव
- दूसरों के प्रति अत्यधिक अनुकूलता एवं सम्मान का प्रदर्शन
- जोखिम लेने से बचना
- भोजन सम्बन्धी अथवा मनोभाव सम्बन्धी प्रतिबलपूर्ण परिस्थितियों के प्रति तीव्र कष्टकारी भावनाओं के साथ प्रतिक्रिया करना।
- आदर्श या परिपूर्णता पर अत्यधिक ध्यान देना।

अधिकांश अध्ययनों में इस तथ्य को स्वीकार किया गया है कि मनोजन्य क्षुधाह्रास के रोगी आदर्श या परिपूर्णता के प्रति अत्यन्त जागरूक रहते हैं जिसके कारण वे नकारात्मक आत्म-मूल्यांकन में बड़े पैमाने पर लिप्त हो जाते हैं। ये रोगी, विशेषकर, स्वयं का आत्म-मूल्यांकन तब अधिक करते हैं जब वे स्वयं को अधिक शारीरिक भार वाला प्रत्यक्षित करते हैं।

(ii) विकासात्मक कारक—मनोजन्य क्षुधाह्रास अधिकांशत: किशोरावस्था में ही आरम्भ होता है। यौवनारम्भ एवं द्वितीयक यौन विशेषताओं के विकास की अवधि में ही इस रोग के आरम्भ होने से यह संकेत मिलता है कि यौवनारम्भ की अवधि स्वयं ही एक जोखिमपूर्ण कारक हो सकती है। इस अवधि में शारीरिक परिपक्वता, समवयस्कों के साथ बदलते सम्बन्ध एवं नयी भूमिकाओं के प्रति मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रियायें भी मनोजन्य क्षुधाह्रास के विकास में भूमिका निभा सकती हैं।

ऐसा प्रतीत होता है कि किशोरावस्था में विशिष्ट माँगों के प्रतिक्रियास्वरूप मनोजन्य क्षुधाह्रास उत्पन्न होता है। किशोर अधिक से अधिक रूप में स्वशासित एवं स्वतंत्र व्यवहार करना चाहते हैं तथा अपनी सामाजिक एवं लैंगिक क्रियाशीलता को बढ़ाना चाहते हैं। मनोग्रस्तता के रोगी भक्षण एवं शरीर भार वृद्धि के प्रति अपनी पूर्वधारणाओं को किशोरावस्था के अन्य सामान्य क्रियाओं से प्रतिस्थापित कर देते हैं जो मनोग्रस्तताओं के समान ही होते हैं। मनोजन्य क्षुधाह्रास के रोगियों में स्वयं के स्वतंत्र अस्तित्व के बोध का अभाव होता है और इनमें से कई यह अनुभव करते हैं कि उनके शरीर का नियंत्रण किसी प्रकार से उनके जनकों के पास है। अत: उपवास के द्वारा वे एक अलग एवं विशिष्ट व्यक्ति के रूप में पहचान पाने का प्रयास करते हैं। इस रोग का रोगी अत्यधिक आत्म-अनुशासन के द्वारा ही स्व-शासन एवं स्व-नियंत्रण के बोध को उत्पन्न कर सकता है।

(iii) मनोगत्यात्मक दृष्टिकोण—मनोविश्लेषणवादियों के अनुसार, मनोजन्य क्षुधाह्रास के रोगी स्वयं को अपनी माताओं से मनोवैज्ञानिक रूप से अलग करने में असमर्थ होते हैं। उन्हें यह अनुभव होता है कि उनकी भावनाओं को न समझने वाली माँ बलात् ही उनके शरीर में अन्तर्निवेश कर गयी है। उपवास के द्वारा ये व्यक्ति इस आन्तरिक अन्तर्निवेशित वस्तु के विकास को रोकना चाहते हैं तथा उसे नष्ट करना चाहते हैं। मनोजन्य क्षुधाह्रास के कई रोगी यह अनुभव करते हैं कि मुखीय इच्छायें लालच भरी होती हैं, अत: ये अस्वीकार्य हैं।

(iv) पारिवारिक विशेषताएँ—मनोजन्य क्षुधाह्रास के रोगियों के परिवारों में कुछ विशिष्ट विशेषताएँ पायी जाती हैं जिनका सम्बन्ध रोगियों के मानसिक एवं व्यक्तित्व विकास से हो सकता है। ये विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

- परिवार में बेसुरा (लयभंग) मनोभाव अथवा मनोवैज्ञानिक तनाव के प्रति सहनशीलता में कमी,
- उपयुक्तता अथवा नियम पालन पर अत्यधिक बल।
- जनकों द्वारा अति दिशा निर्देश अथवा स्वायत्त इच्छाओं का प्रखर (तीव्र) हतोत्साहन,
- द्वन्द्वों के समाधान में निम्न कौशल।

उपर्युक्त विशेषताओं से यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि ऐसे विषम पारिवारिक वातावरण में रहने के कारण युवा लड़कियों को अपनी भावनाओं एवं इच्छाओं का खुलकर प्रदर्शन करने में कठिनाई होती है, उन्हें कोई बाह्य आलम्बन (सहारा) भी प्राप्त नहीं हो पाता है, जनक भी सहारा नहीं प्रदान करते हैं और वे किशोरावस्था में उभर रहे स्वशासन एवं स्वयं के व्यक्तित्व या अस्तित्व की सामान्य भावनाओं का किसी और रूप में प्रदर्शन भी नहीं कर पाती हैं। ऐसी अवस्था में लड़की दुबली-पतली बनकर परिपूर्णता एवं आदर्श का उदाहरण बन जाती है तथा वह जीवन की आधारभूत आवश्यकता, जैसे भूख से भी अपने को दूर रखती है।

III. सामाजिक-सांस्कृतिक कारक

मनोजन्य क्षुधाह्रास के आरम्भ होने में सामाजिक-सांस्कृतिक कारकों के प्रभाव को स्वीकार किया गया है। पश्चिम के विकसित संस्कृतियों में तथा अन्य जगहों में भी जहाँ इन संस्कृतियों का प्रभाव फैल चुका है, अब महिलाओं में दुबले-पतले रहने को मान्यता-सी प्राप्त होती मालूम हो रही है। भक्षण विकृति की इन घटनाओं का आरम्भ अक्सर ही सामान्य उपवास (dieting) से होता है जो हमारे समाज में एक सामान्य-सी घटना है। प्रचार माध्यम भी एक आदर्श एवं सुन्दर महिला होने के लिए दुबले-पतले होने का ही मानदंड पेश करते हैं और साथ ही वे इसके लिए भिन्न-भिन्न प्रकार के आहार प्रणालियों एवं चुस्ती-दुरुस्ती के उपायों का

प्रचार भी करते हैं। सामान्यतया प्रचार माध्यमों में प्रचारित आदर्श युवती की शारीरिक आकृति से प्रभावित होकर ये अपनी काया के प्रति बलात् ही विक्षोभित (बिगड़े हुए) प्रत्यक्षीकरण के झुकाव से ग्रस्त हो जाती हैं और ये हमेशा ही यह सोचती रहती हैं कि वे कितनी मोटी हैं ? इस प्रकार के प्रत्यक्षित झुकाव से ग्रस्त युवतियाँ एवं महिलाएँ यह विश्वास करती हैं कि वे जितनी दुबली हैं पुरुष उससे भी अधिक दुबली महिलाओं को पसन्द करते हैं। अब मनोजन्य क्षुधाह्रास के उदाहरण अन्य विकासशील एवं अविकसित देशों में भी मिल रहे हैं और इस संलक्षण के विवरण सत्रहवीं शताब्दी में भी मिले हैं जिनसे यह संकेत भी मिलता है कि इस रोग में सांस्कृतिक कारकों के अलावा अन्य कारकों की भूमिका भी हो सकती है।

चिकित्सा

मनोजन्य क्षुधाह्रास के जटिल मनोवैज्ञानिक एवं चिकित्सकीय उलझावों के परिप्रेक्ष्य में इस विकृति की चिकित्सा के लिए एक व्यापक चिकित्सा योजना की आवश्यकता पड़ती है, जिसमें आवश्यकतानुसार अस्पताल में दाखिला एवं वैयक्तिक तथा परिवार चिकित्सा, दोनों शामिल होते हैं। इस रोग की चिकित्सा में व्यवहारवादी, अन्तर्वैयक्तिक एवं संज्ञानात्मक दृष्टिकोणों तथा भेषज चिकित्सा का प्रयोग भी किया जा सकता है।

(I) अस्पताल में दाखिला

मनोजन्य क्षुधाह्रास के उपचार में प्रथम महत्व रोगी की पोषाहार दशा की पुनर्स्थापना करना होता है। निर्जलीकरण, अनाहार (starvation) एवं विद्युत अपघटयों सम्बन्धी असामान्यताएँ रोगी के स्वास्थ्य को खतरे में डाल सकती हैं और कुछ उदाहरणों में रोगी की मृत्यु भी हो सकती है। रोगी के स्वास्थ्य का परीक्षण करके ही रोगी को अस्पताल में दाखिल करने का निर्णय लिया जाता है। सामान्यत: जिन रोगियों का शारीरिक भार उनकी ऊँचाई के अनुरूप निर्धारित भार से 20 प्रतिशत कम होता है उन्हें अंतरंग-रोगी कार्यक्रमों में चिकित्सा उपलब्ध करायी जाती है और जिन रोगियों का शारीरिक भार उनकी ऊँचाई के अनुरूप निर्धारित भार से 30 प्रतिशत कम होता है उन्हें अस्पताल में 2 से 6 माह के लिए भर्ती होने की सलाह दी जाती है।

अंतरंग-रोगी चिकित्सा कार्यक्रमों में व्यवहार प्रबंधन दृष्टिकोण, वैयक्तिक मनोचिकित्सा, परिवार शिक्षा एवं चिकित्सा तथा भेषज चिकित्सा का मिले-जुले रूप में प्रयोग किया जाता है। मनोजन्य क्षुधाह्रास के अधिकतर रोगी मनोचिकित्सा के लिए अनिच्छुक होते हैं तथा इसका प्रतिरोध भी करते हैं। उन्हें चिकित्सक तक परिवार के परेशान सदस्यों या मित्रों द्वारा उनकी इच्छा के विरुद्ध लाया जाता है। वे अस्पताल में भर्ती भी नहीं होना चाहते हैं तथा इसकी आलोचना भी करते हैं। जब इन्हें अस्पताल में दाखिले के लाभ, जैसे अनिद्रा एवं विषाद से छुटकारा के बारे में समझाया जाता है तब भी वे मुश्किल से ही अस्पताल में भर्ती होते हैं। अस्पताल में दाखिले के पश्चात् रोगी के परिवार के सदस्यों के सहयोग एवं विश्वास की आवश्यकता पड़ती है। परिवार के सदस्यों को यह स्पष्ट बता देना चाहिए कि आने वाले कई सप्ताहों में रोगी अस्पताल से बाहर आने के लिए कई प्रकार के बहाने बनाएगा।

अस्पताल में रोगी की चिकित्सा योजना में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए–प्रतिदिन प्रात:काल मूत्र विसर्जन के पश्चात् रोगी का शारीरिक भार ज्ञात करके अंकित करना चाहिए। रोगी के द्वारा प्रतिदिन ग्रहण किये गये द्रव भोज्य पदार्थों की मात्रा तथा निर्गत मूत्र की मात्रा को अंकित करना चाहिए। यदि रोगी वमन कर रहा है तब उसके शरीर द्रव में विद्युत अपघटयों के स्तर की जाँच आवश्यक होती है। रोगी के वमन को कुछ सावधानियों एवं नियंत्रणों को अपना कर रोका जा सकता है। यदि भोजन ग्रहण करने के 2 घण्टे बाद तक रोगी को प्रसाधन कक्ष में न जाने दिया जाये अथवा यदि रोगी के साथ एक परिचारक उपस्थित रहे तब वमन घटित नहीं होता है। जब ये रोगी सामान्य रूप में भोजन ग्रहण करने लगते हैं तब इनमें कब्ज़ उत्पन्न हो सकता है। ऐसी दशा में मृदुविरेचकों (laxative) का प्रयोग कदापि नहीं करना चाहिए बल्कि मल को ढीला करने वाले पदार्थों (softener) का प्रयोग करना चाहिए। यदि रोगी दस्त की शिकायत करता है तब इसका अर्थ यह होता है कि रोगी अवश्य ही किसी मृदुविरेचक का सेवन कर रहा है। रोगी को एक समय में अधिक भोजन नहीं देना चाहिए बल्कि उसके लिए आवश्यक भोज्य पदार्थ को प्रतिदिन छ: समान आहारों में बाँट कर देना चाहिए।

(II) मनोचिकित्सा

(i) संज्ञानात्मक-व्यवहारात्मक चिकित्सा—बहिरंग एवं अंतरंग रोगी सत्रों, दोनों में ही संज्ञानात्मक-व्यवहार चिकित्सा का प्रयोग किया जा सकता है। शारीरिक भार में वृद्धि उत्पन्न करने में व्यवहार चिकित्सा प्रभावकारी पायी गयी है। इस रोग की संज्ञानात्मक-व्यवहार चिकित्सा में निरीक्षण एक आवश्यक अंग है। रोगियों को स्वयं के आहार की मात्रा, भावनाओं एवं संवेगों, अनियंत्रित भक्षण एवं रेचक व्यवहारों तथा स्वयं के अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्धों में समस्याओं का निरीक्षण करना सिखाया जाता है। इस चिकित्सा में रोगियों को स्वयं के स्वायत्त विचारों को पुनर्गठित करना तथा स्वयं के विश्वासों को चुनौती देना भी सिखाया जाता है।

(ii) परिवार चिकित्सा—ऐसे सभी रोगियों, जो अपने परिवार के साथ रह रहे हैं, के परिवार का विश्लेषण करना आवश्यक होता है ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि किस प्रकार के परिवार चिकित्सा या परामर्श की आवश्यकता पड़ेगी। कुछ दशाओं में परिवार चिकित्सा का प्रयोग नहीं किया जा सकता है परन्तु वैयक्तिक चिकित्सा में पारिवारिक सम्बन्धों से सम्बन्धित समस्याओं पर ध्यान दिया जा सकता है। कभी-कभी तत्काल उपस्थित परिवार के सदस्यों के साथ संक्षिप्त परामर्श सत्र की आवश्यकता पड़ सकती है।

(III) भेषज चिकित्सा

मनोजन्य क्षुधाह्रास के केन्द्रीय लक्षणों की प्रभावकारी चिकित्सा के लिए अभी तक किसी विशिष्ट औषधि की पहचान नहीं की जा सकी है। फिर भी, प्रतिबंधित प्रकार के मनोजन्य क्षुधाह्रास के रोगियों में सिप्रोहेप्टाडाइन (Cyproheptadine) नामक औषधि के प्रयोग से लाभदायक परिणाम मिले हैं। सिप्रोहेप्टाडाइन एक हिस्टामीन एवं सेरोटोनिन प्रतिरोधी औषधि है। एमिट्रिप्टालीन (Amitriptaline) के प्रयोग से भी कुछ लाभ होता है। मनोजन्य क्षुधाह्रास की चिकित्सा में कुछ अन्य औषधियों, जैसे क्लोइमिप्रामीन, पिमोजाइड (Pimozide) एवं क्लोरप्रोमाजीन (Chlorpromazine) का भी प्रयोग किया गया है। फ्लूऑक्सेटीन से भी शरीर भार वृद्धि के प्रमाण मिले हैं।

2. मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति

[BULIMIA NERVOSA]

ऐसा माना जाता है कि 'बुलिमिया' (Bulimia) शब्द की उत्पत्ति ग्रीक भाषा के शब्दों (i) 'bous' (बॉउस) से हुई है जिसका अर्थ होता है—पशुओं (cattle) का सिर एवं (ii) 'limos' (लिमॉस) शब्द का अर्थ होता है—क्षुधा (भूख) से हुई है।इन दोनों शब्दों का अर्थ बनता है—एक बैल की भूख। हजारों वर्षों से अत्यधिक भोजन ग्रहण करना मनुष्यों के लिए एक समस्या रही है और भोजन ग्रहण करने के बाद उल्टी करने के चलन का इतिहास भी हजारों वर्ष पुराना है (Nasser, 1993)। परन्तु सन् 1979 में ही मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति के संलक्षण की औपचारिक रूप से व्याख्या की गयी (Russell, 1979)। सन् 1980 में डी.एस.एम. के तीसरे संस्करण (डी.एस.एम.-III) में इस संलक्षण का एक विकृति के रूप में समावेश किया गया तथा तब से अब तक इसके नैदानिक मापदण्डों में कुछ मामूली परिवर्तन ही किये गये हैं।

बुलिमिया शब्द का अर्थ हम 'बिंज भक्षण' (Binge eating) के समान मान सकते हैं जिसमें व्यक्ति समान परिस्थितियों एवं समय में एक सामान्य व्यक्ति की तुलना में अधिक भोजन ग्रहण करता है तथा साथ ही उसमें नियंत्रण खो देने की तीव्र भावना भी उत्पन्न होती है। ये घटनाएँ इस रोग से ग्रस्त व्यक्ति में बारम्बार घटती हैं। जब ऐसे व्यक्तियों में 'बिंज भक्षण' उत्पन्न होता है जिनका शारीरिक भार सामान्य अथवा अधिक हो तथा जो अपने शारीरिक भार एवं आकृति के प्रति चिंतित भी रहते हैं तथा जो नियमित रूप से ऐसे व्यवहार में भी लिप्त रहते हैं जिससे की 'बिंज भक्षण' से उत्पन्न कैलोरी वृद्धि को रोका जा सके, तब ऐसे 'बिंज भक्षण' को 'मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति विकृति' कहा जाता है।

डी.एस.एम.-IV-टी.आर. के अनुसार, 'मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति' में 'बिंज भक्षण' के साथ-साथ शारीरिक भार वृद्धि को रोकने के अनुपयुक्त तरीके भी अपनाए जाते हैं। 'बिंज भक्षण' के बार-बार उत्पन्न

होने वाले प्रसंगों में नियंत्रण से बाहर चले जाने की भावना भी उपस्थित होती है। सामाजिक अवरोध अथवा शारीरिक कष्ट (जैसे पेट का दर्द) के कारण 'बिंज भक्षण' रुक जाता है तथा इसके बाद अक्सर ही ग्लानि, विषाद अथवा आत्म-अरुचि (खीज) की भावनाएँ उत्पन्न होती हैं। इस रोग के निदान के लिए यह आवश्यक है कि अतिभक्षण के प्रसंग एवं क्षतिपूर्तिपरक व्यवहार प्रति सप्ताह दो बार लगातार तीन महीने तक उत्पन्न हों तथा साथ ही शारीरिक भार एवं आकृति के प्रति अतिचिंता के मनोवैज्ञानिक लक्षण भी उपस्थित हों। ICD-10 के अनुसार, इस विकृति में उपर्युक्त मापदण्डों के अलावा व्यक्ति में भक्षण के प्रति एक दृढ़ पूर्वव्यस्तता एवं भोजन ग्रहण करने की एक तीव्र इच्छा या बाध्यता का बोध भी उपस्थित होना चाहिए।

डी.एस.एम.-IV-टी.आर. के अनुसार, मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति के दो उप-प्रकार होते हैं- (i) विरेचक प्रकार (Purging type), एवं (ii) विरेचक विहीन प्रकार (Non-purging type)। विरेचक प्रकार में व्यक्ति अतिभक्षण के प्रसंगों के बाद किसी विरेचक (रेचक/दस्तावर पदार्थ या स्वजन्य वमन या मूत्र-जनक) का प्रयोग करता है, जबकि विरेचक विहीन प्रकार में व्यक्ति अतिभक्षण के प्रसंग के बाद उपवास या अत्यधिक व्यायाम करता है ताकि शारीरिक भार में वृद्धि न हो सके। मनोजन्य क्षुधाह्रास के रोगियों की तुलना में मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति के रोगियों का शारीरिक भार सामान्य ही रहता है। मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति के क्षेत्र में अधिकांश शोध विरेचक प्रकार के रोगियों पर ही हुए हैं।

व्यापकता एवं घटनाक्रम

मनोजन्य क्षुधाह्रास की तुलना में मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति का घटनाक्रम अधिक है। युवा महिलाओं में इस रोग की व्यापकता का अनुमान लगभग 1-3% तक है और लगभग इतने ही प्रतिशत अन्य व्यक्तियों में यह रोग आंशिक रूप में उपस्थित होता है (Kendler et al, 1991; Garfinkel et al, 1993)। यह विकृति भी पुरुषों की तुलना में महिलाओं में दस गुना अधिक पायी जाती है परन्तु मनोजन्य क्षुधाह्रास की तुलना में इस विकृति का आरम्भ किशोरावस्था में अपेक्षाकृत देर से होता है। इस विकृति का आरम्भ वयस्कावस्था के आरम्भ में भी हो सकता हैं। शोध अध्ययनों से यह तथ्य भी प्रकाश में आया है कि सन् 1960 से पूर्व जन्मी महिलाओं की तुलना में सन् 1960 के बाद जन्मी महिलाओं में इस रोग की व्यापकता अधिक है (Kendler et al, 1991)।

हेतुक कारक

I. पर्यावरणीय/जैविक कारक

मनोजन्य क्षुधाह्रास के विकास में भूमिका निभाने वाले कई पर्यावरणीय कारकों में से कुछ कारक मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति के विकास में भी सहायक हो सकते हैं क्योंकि ऐसा देखा गया है कि मनोजन्य क्षुधाह्रास से ग्रस्त सभी रोगियों में से लगभग 20-30% आगे चलकर मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति में परिवर्तित हो जाते हैं। पारिवारिक अध्ययनों से भी यह ज्ञात हुआ है कि मनोजन्य क्षुधाह्रास एवं मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति, दोनों एक ही (समान) परिवारों में घटित होते हैं और इस तथ्य से संकेत मिलता है कि इन दोनों भक्षण विकृतियों में सहभागी पर्यावरणीय एवं/अथवा वंशानुगत कारकों की भूमिका हो सकती है।

मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति के रोगियों में चिंता एवं मनोदशा विकृतियों की उच्च दर पायी गयी है। विशेषकर प्रमुख विषादी विकृति एवं गहन विषादी विकृति (Kendler et al, 1991)। मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति के लगभग 75% व्यक्तियों में मनोभावी विकृतियों का पूरे जीवन काल में अनुमान किया गया है। इसके अतिरिक्त इस रोग से ग्रस्त व्यक्तियों के परिवार के सदस्यों में भी मनोभावी विकृतियों की उच्च दर पायी गयी है। इन अध्ययनों से यह अनुमान किया जा सकता है कि विषाद के प्रति एक वंशानुगत प्रवृत्ति की उपस्थिति के कारण व्यक्ति मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति के विकास के प्रति पूर्वप्रवण हो सकता है (Kassett et al, 1989)।

कुछ अध्ययनों में अतिभक्षण एवं विरेचन के चक्र को स्नायुरसायनों से सम्बन्धित करने की कोशिश की गयी है। चूँकि मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति में विषादरोधी औषधियों से लाभ होता है और चूँकि तृप्तता

(क्षुधा-तृप्ति) से सेरोटोनिन का सम्बन्ध पाया गया है, अत: इस विकृति में सेरोटोनिन एवं नारइपीनेफ्रीन की भूमिका बतायी गयी है। मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति के वमन करने वाले रोगियों के शरीर द्रव (plasma) में एन्डार्फिन (endorphin) का उच्च स्तर पाया गया है। वमन के बाद ये रोगी कुछ अच्छा महसूस करते हैं और इसका कारण एन्डार्फिन स्तर का उच्च होना हो सकता है।

II. मनोसामाजिक कारक

मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति से ग्रस्त व्यक्तियों में नवीनता की माँग, आवेगात्मकता एवं हानि-परिहार (Brewerton et al, 1993) जैसे स्वभाव सम्बन्धी गुणों का उच्च स्तर पाया जाता है। इस विकृति के रोगी भी किशोरावस्था की माँगों से परेशानी अनुभव करते हैं। साधारणत: ये बाह्य गतिविधियों में भाग लेने वाले, आवेगपूर्ण तथा क्रोधी स्वभाव के होते हैं। ये सभी परिपूर्णता के प्रति पूर्वधारणा रखते हैं तथा इसके कारण ही ये स्वयं का नकारात्मक आत्ममूल्यांकन करते हैं। यह नकारात्मक आत्म-मूल्यांकन तब अधिक होता है जब वे स्वयं को सामान्य से अधिक शारीरिक भार वाला प्रत्यक्षित करते हैं। इनमें भी वयस्क होने का भय बना रहता है।

कई अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ है कि मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति के रोगियों में द्रव्य-व्यसन विकृति, सांवेगिक अस्थिरता एवं आत्मक्षतिपरक (self-injurious) व्यवहार की व्यापकता अधिक होती है (Bulik et al, 1997)। इन रोगियों के परिवार के सदस्यों में द्रव्य-व्यसन विकृतियाँ भी पायी गयी हैं (Lilenfeld et al, 1998)। इन परिणामों के आधार पर यह अनुमान लगाया गया है कि व्यवहारों का यह समूह उनमें आवेगात्मकता की सामान्य प्रवृत्ति एवं स्व-दिशात्मक आक्रामकता की अभिव्यक्ति होता है और बिंज भक्षण तथा विरेचन उन कई अभिव्यक्तियों में से एक हो सकते हैं।

मनोजनय अतिक्षुधाग्रस्ति के रोगी भी उच्च लक्ष्य प्राप्त करना चाहते हैं और सामाजिक दबावों के प्रति कम अनुक्रिया करते हैं। ये अपने जनकों के उपेक्षात्मक एवं तिरस्कारपूर्ण होने का भी विवरण देते हैं।

मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति

मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति के अधिकतर रोगियों को अस्पताल में भर्ती होने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। सामान्यत: इस विकृति से ग्रस्त रोगी अपने लक्षणों को छिपाते नहीं हैं। इन रोगियों को अक्सर ही मनोचिकित्सा की आवश्यकता पड़ती है जो दीर्घकालिक हो सकती है। इस विकृति से ग्रस्त कुछ मोटे रोगियों में मनोचिकित्सा से लाभ मिलता है। कुछ अन्य रोगियों में स्थिति खराब हो सकती है जब उनमें अनियंत्रणकारी भूख के दौरे उत्पन्न होते हैं अथवा उनमें आत्महत्या के विचार उठते हैं या जब वे साथ ही किसी द्रव्य-दुर्व्यसन से ग्रस्त होते हैं।

(I) संज्ञानात्मक-व्यवहार चिकित्सा—मनोजन्य अतिक्षुधा ग्रस्ति विकृति की चिकित्सा में प्रमुखत: संज्ञानात्मक-व्यवहार चिकित्सा का ही प्रयोग किया जाता है। इस रोग की चिकित्सा में लगभग 5 से 6 महीने की अवधि में चिकित्सा के 18 से 20 सत्रों की आवश्यकता पड़ सकती है। इसमें चिकित्सक एक व्यापक एवं पूर्वनियोजित चिकित्सा कार्यक्रम का प्रयोग करता है तथा इसमें कई संज्ञानात्मक एवं व्यवहार विधियाँ प्रयोग की जाती है जिनका प्रमुख लक्ष्य होता है—(i) अति भक्षण एवं प्रतिबंधित आहार के स्व-साधित व्यवहार चक्र में बाधा उत्पन्न करना, एवं (ii) भोजन, शारीरिक भार, शरीर आकृति तथा समग्र आत्म-धारणा से सम्बन्धित दुष्क्रियात्मक संज्ञानों को परिवर्तित करना।

(II) भेषज चिकित्सा—मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति की चिकित्सा में विषाद प्रतिरोधी औषधियों को लाभकारी पाया गया है। इनमें सेरोटोनिन पुन:उद्ग्रहण रोधी औषधियाँ, जैसे फ्लूऑक्र्सटीन, प्रमुख रूप से प्रयोग की जाती हैं। विषाद की अनुपस्थिति में भी विषाद प्रतिरोधी औषधियाँ लाभकारी पायी गयी हैं। इमिप्रामीन, डेसिप्रामीन (Desipramine), ट्राजोडोन (Trazodone) एवं मोनोअमीन ऑक्सीडेज़ अवरोधी औषधियाँ भी लाभकारी पायी गयी हैं। सामान्यत: इस रोग की चिकित्सा में विषाद प्रतिरोधी औषधियों की वही मात्रा प्रयोग की जाती है जो विषाद्री विकृति की चिकित्सा के लिए अनुमन्य हैं, सिर्फ फ्लूऑक्सेटीन की थोड़ी अधिक मात्रा (60 से 80 मिलीग्राम/प्रतिदिन) की आवश्यकता पड़ती है।

3. बिंज भक्षण विकृति
(BINGE EATING DISORDER)

बिंज भक्षण विकृति एक नयी नैदानिक संकल्पना है जिसे अब डी.एस.एम.-IV-टी.आर. में सम्मिलित कर लिया गया है। बिंज भक्षण का अर्थ होता है—अति एवं अनियंत्रित भक्षण। इस विकृति की निम्नलिखित नैदानिक विशेषताएँ होती हैं—

- पृथक-पृथक समयावधि में भक्षण—एक समयावधि एवं परिस्थिति में एक सामान्य व्यक्ति की तुलना में अत्यधिक भोजन ग्रहण करना।
- भक्षण की अवधि में आत्म-नियंत्रण के अभाव का बोध।

यहाँ बिंज भक्षण विकृति के निदान के लिए यह आवश्यक है कि उपर्युक्त प्रकार के भक्षण व्यवहार के साथ निम्नलिखित में से तीन या अधिक विशेषताएँ उपस्थिति हों—

- सामान्य की तुलना में अति तीव्र गति से भक्षण।
- असुखद रूप से पेट भर जाने तक भक्षण (जैसे, पेट में दर्द उत्पन्न होने तक)।
- भूख के अभाव की अवस्था में भी अत्यधिक भोजन ग्रहण करना।
- अकेले ही भोजन ग्रहण करना ताकि सामाजिक निंदा एवं शर्मिंदगी से बचाव हो सके (लोग यह न कह सकें कि कितना भोजन ग्रहण करता है)।
- अत्यधिक भोजन ग्रहण करने के बाद स्वयं से खिन्नता का बोध, विषाद या आत्म-ग्लानि का अनुभव।
- बिंज भक्षण की उपस्थिति के कारण अत्यन्त दुःख।
- प्रत्येक सप्ताह में कम से कम 2 बार बिंज भक्षण के प्रसंग उत्पन्न होना (लगातार 6 महीने तक)।

इस रोग के निदान के लिए यह भी आवश्यक है कि बिंज भक्षण का सम्बन्ध नियमित क्षतिपूर्तिपरक व्यवहार से न हो तथा यह सिर्फ मनोजन्य क्षुधाह्रास या मनोजन्य अतिक्षुधाग्रस्ति की अवधि में न उत्पन्न हो।

❖❖